* ओ३म् *

सार संग्रह।

संग्रहकर्त्ता—

सूरज देवी,

भगवद्भक्ति आश्रम

रामपुरा.

द्वितीयवार २५०० } संवत् १९७७ वि० { मूल्य प्रेम

भूमिका ।

उस परम दयालु भगवान को कोटिशः धन्यवाद है जिसकी दया से मुझे आज इस पुस्तक के द्वितीय संस्करण की भूमिका सम्बन्धी कुछ शब्द लिखने का शुभ अवसर मिला है यह बड़े गौरव की बात है कि इसकी संग्रह-कर्त्री हमारी एक पूज्यनीय व आदरणीय भगनी है जो विदुषी, धार्मिका और सुशीला होने के अतिरिक्त आचार और त्याग की साक्षात् मूर्ती है। जिसने बालकपन से ही सांसारी सुखों को त्याग दिया है और अपना जीवन श्रीपरम पूज्य सद्गुरु भगवान के चरणोंमें अर्पण करके ब्रह्म-विद्याभ्यास में लगाया है। श्रीमती सूरजदेवी को जैसी उत्तम लेखन-शक्ति मिली है वैसे ही वक्तृत्व-शक्ति भी कम नहीं पाई है।

पुस्तक के सम्बन्ध में इतना कहना काफी है कि प्रथम तो यह उन पूजनीय महात्माओं की वाणियां हैं कि जिनके एक २ शब्द के श्रद्धा, भक्ति युक्त गान से जीवका इस संसार सागर से उद्धार हो सकता है फिर उनमें से भी यह सार-रूप हैं। इनका पूर्ण आनन्द तो वही प्राप्त कर सकेगा जो श्री सद्गुरु के चरणों का प्रसाद पाकर बार २ इनका मनन व

निदिध्यासन करेगा परन्तु जो मनुष्य एकवार भी इनको पढ़ेगा उसका अन्तःकरण अवश्य कुछ न कुछ पवित्र होगा और वह स्वयं अपने मन में आनन्द की तरङ्ग का अनुभव करेगा। आरम्भ में मंगलाचरण है पश्चात् गुरुभक्ति, भगवान के नाम की महिमा, ज्ञान, योग, भक्ति, वैराग इत्यादि अनेक विषयों पर श्लोक, अष्टक, दोहा, चौपाई, सवैया, सोरठा, भजन, कवित्त, कुण्डलियां, पद, ग़ज़ल, ख्याल सब प्रकार की कविता का आनन्द इसमें एक स्थान पर मौजूद है। अन्त में हमारी यह प्रार्थना है कि जो इस पुस्तक को पढ़ें उनको सद्गुरु के चरण कमलों में प्रीति हो और वह भगवान की भक्ति के अनुरागी होकर भवसागर से तरने के अधिकारी हों। पुस्तक के आरम्भ में श्रीसद्गुरु देव का उपदेश व भगवान की प्रार्थना है जिसके नित्य करने से मनुष्य का कल्याण होता है॥

भगवद्भक्ति आश्रम,
रामपुरा
जन्माष्टमी १९७१

विनीत—
दिलीप बनस्थली

* ओ३म् *

* सद्गुरु का उपदेश *

ओ३म् तत्सत् परब्रह्मणेनमः ।

समुद्र जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं और उसी समुद्र में जब लहर उठती है तब उसी को हम शक्ति या माया कहते हैं वही देश काल निमित्त स्वरूप है। सविशेष सगुण निर्विशेष निर्गुण उसके दो रूप हैं। पहिले रूप में वह ईश्वर जीव और जगत् है और दूसरे रूप में वह अज्ञात और अज्ञेय है। सर्व शक्तिमत्ता सर्वव्यापकता अनन्तदया उसी जगज्जननी जगदम्बा प्रेम रूपिणी भगवतीके गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पीछे अनन्त शक्ति विद्यमान है एक कणबिन्दू कृष्ण बुद्ध खीष्ट आदि और जगत् का विस्तार एक बिन्दु को प्रकाशित करता है एक आत्मा ब्रह्म भिन्न २ सर्व उपाधियों में प्रकाशित होता है। बड़प्पन की डींग दलबन्दी ईर्ष्यादि सदा के लिये छोड़ दो पृथ्वी की भांति संहिष्णु हो। लड़कपन की चञ्चलता और युवापन की गम्भीरता दोनों मिलाकर सबके साथ प्रेम से रहो।

आत्मा के स्वरूप का व्यक्त और कभी अव्यक्त भाव होता है। आत्मा मानों बादलों से ढके हुए सूर्य्य की न्याई है। हृदय को समुद्र के समान महान् बना डालो, क्षुद्र भावों को पार कर जाओ, अमङ्गल के आने पर भी आनन्द में उन्मत्त होजाओ। संसार को एक चित्र की भांति देखो जगत् में कोई तुमको विचलित न कर सकेगा। अहन्ता को दूरकर दृढ़ता से खड़े होजाओ काम कांचन मान यश को छोड़कर ईश्वर को दृढ़ता से पकड़ो। विधि निषेधके घेरेमें पड़े रहनेसे आत्मा का प्रसार नहीं होता। जो जितनी ही आत्मानुभूति का प्रकाश कर सकता है उसके उतने ही विधि निषेध कम होजाते हैं। दूसरों की सेवा शुभ कर्म है इसीके प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है इसी के प्रभाव से सबके भीतर बैठे हुए अन्तर्यामी भगवान प्रकाशित होते हैं। आदेश के अनुसार सङ्गठन करने का उद्योग करना, धर्म का यही लक्ष्य है यही उद्देश्य है। आदर्श धार्मिक क्षमा, धृति शौच शान्ति उपासना और ध्यान में परायण आदर्श का अवलम्बन विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है। जहां प्रेम वहीं विस्तार जहां स्वार्थता वहीं संकोच। अतएव प्रेम ही जीवन का एक आधार है अवश्य अहन्तुक प्रेम करना चाहिये वही एक मात्र

जीवन गति का नियम न करने वाला है जिस कर्म से जीवों के मन में धीरे २ ब्रह्मभाव के उदय होने में सहायता पहुंचे वही कर्म उत्तम है यदि किसी को अधिक सुभीता देना हो तो बलवान की अपेक्षा दुर्बल को अधिक सुभीता दो सदा दाता बनो अपना सर्वस्व दे डालो पर बदले में कुछ न चाहो। दूसरों से प्रेम करो, सहायता करो, सेवा करो तुम से जो कुछ बने दूसरों के लिये करो पर सावधान पलटेमें कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत, कर्माकर्म का साधन करो।

"परोपकाराय सतांहि जीवितम्"

श्री सच्चिदानन्देश्वराय नमः

ओ३म् श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः।

आलस्यं मृत्युरित्याहुर्यत्नं जीवन मित्युत।

पिपीलिकाः कणशः कणशोऽन्नं समाहृत्य २विवरं प्रपूरयन्ति पुत्तिका बालाक सञ्चयात् क्षणमपि न विरमन्ति।

सूर्यादयोग्रहता वेगेन भ्रमन्तः क्षणमपि विश्रान्तिं कांक्षन्ति क्षणमपि स्वभिते समीरणो कथमिव व्याकुली भवन्तिजीवाः

हे सच्चिदानन्द अनन्त ज्ञान स्वरूप नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव, सर्वशक्तिमान सर्व हृदयान्तर्गत सर्वव्यापक प्रभु यदि मैं तुमको यहां मनुष्य शरीर में रहते हुए भी अपने आत्मा में साक्षात् नहीं कर पाता तो और कहां पा सकूंगा अय! मेरे प्यारे परमात्मा मेरे हृदय और नेत्रों में प्रकट होकर साक्षात् दर्शन दिखाओगे तो इस जीव का कल्याण होगा। ओ३म् परमात्मा यह न वह वरंच सारे पदार्थों में है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसका जीवन चरित्र है जो सब के हृदय में विराजमान होकर वह स्वयं लिख रहा है। सारे पदार्थ परमात्मा के शब्द हैं और बोलते हैं कि आओ २ मेरी ओर आओ। जो ईश्वर ध्वनि को नहीं सुनता वह बहरा है। जो मनुष्य उत्पन्न हुए पदार्थों के सौन्दर्य को नहीं देखता वह अन्धा है सौन्दर्य विवेक धर्म एक ही है तर्क से हम परमात्मा का चिन्तन करते हैं परन्तु सौंदर्य्य साक्षात् दर्शन कराता है। वह मनुष्य जो इन सकल पदार्थों को निरीक्षण करके भी धन्यवाद गायन नहीं करता वह गूंगा है। संसार की सुन्दर वस्तुयें एक विशेष सौन्दर्य्य की सत्ता की साक्षी हैं प्रत्येक मधुर वस्तु अत्युत्तम मधु को दर्शाती है जो अन्य पदार्थों के सौन्दर्य

और उत्तमता का स्रोत है। उसीको परमात्मा कहते हैं जो वस्तु ईश्वर के समीप है वह उत्तम है और जो दूर है वह निकृष्ट कहाती है। प्रत्यैक पवित्रतायें उस पवित्रता के स्रोत को दर्शाती हैं। जो अच्छा है वह अपने से अत्युत्तम श्रेष्टताकी अस्तित्व का प्रमाण है उच्च स्वर से सकल पदार्थ पुकार रहे हैं कि परमात्मा सब में विद्यमान है। जब हम किसी वस्तु से प्यार करते हैं तो उसके आभ्यन्तर वास करने वाले परमात्मा के कारण से करते हैं। प्यासा मनुष्य जल की अभिलाषा इसलिये करता है कि जल में परमात्मा निवास करते हैं परमात्मा भक्तों के हृदय में प्रकट होते हैं महान् से महान् सुख अच्छे कामों के चिन्तन से होता है परमात्मा उनसे प्यार करते हैं जो बुरे कामों से घृणा कर श्रेष्ठ कार्यानुरत रहते हैं।

—[:*:]—

साधारण नियम ।

१—मनुष्य का पहिला कर्त्तव्य है कि सद्गुरुकी शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे ।

२—उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे ।

३—एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे ।

४—साधु सज्जन का सत्सङ्ग करे ।

५—विषयों के आधीन न हो ।

६—शत्रुओं को मित्र बनावे ।

७—अधिक उपाधि न बढ़ावे ।

८—निरन्तर सारासार का विचार करता रहे ।

९—भूत मात्र पर दया रक्खे ।

१०—अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रक्खे ।

—(०)—

प्रार्थना।

हे परमेश्वर! परमपिता परमात्मन् आप हमारे संरक्षक और सहायक तथा प्रेरक हैं। हम सब मिलकर एक तुम्हारी ही भक्ति करें, तुम्हारे चरणों में श्रद्धा भक्ति पूर्वक शिर झुकाते रहें और एकमात्र तुम्हारी ही सहायता चाहें। अय हमारे आत्मा जगदीश्वर आप अनन्त क्षमा स्वरूप और दयालु हो। हे करुणासागर! हम तुम्हें छोड़ कर और किसकी शरण लें। केवल एकमात्र तुम ही हमारे आधार और अधिष्ठान हो। हे हमारे सर्वस्व! परमात्मन् हम तुम्हारे पवित्र चरणों को वारंवार प्रणाम करते हैं। आप ही हमारी टेक हो और पत रखने वाले हो, प्रतिज्ञा पर आप ही दृढ़ताके स्थिति स्थापक हो। हे अनन्त! अपार प्रकाश स्वरूप, पवित्र ज्योति परमात्मन्! आप हमको श्रेयस्कर श्रेष्ठ मार्ग से अपनी प्राप्ति की ओर ले चलिये, आप ही हमारे सत् पथ प्रदर्शक नेता तथा संचालक हैं हे अन्तर यामिन्! हम तेरे हैं, हमको अन्तरयामी रूप से प्रेरणा करो कि हम तेरे उस मार्ग पर चलें कि जिस पर तेरे पूर्ण भक्त ऋषि महर्षि चले हैं। और जिस मार्ग द्वारा तुमको प्राप्त होचुके हैं। जिन पर तुम्हारा परम अनुग्रह तथा प्रसाद हुआ हो। और हे सर्व शक्तिमान्! हमारे प्रभु हमें उस मार्ग से कभी मत चलाओ जिस पर तेरे अभक्त चले हों, और

तुम्हारी प्रसन्नता से हम कभी वंचित न रहें हे प्रभु! तुम अन्तरयामी प्रेरक सखा हो, हम तुम्हारी ही शरण हैं। अतएव हमारी रक्षा करो। हे जगदीश्वर जगदाधार! हमको वह पवित्र दृढ़ात्मिका बुद्धि प्रदान करो, कि जिसमें केवल एक मात्र तुम्हारा ही दृढ़ विश्वास तथा निश्चय हो। हमको वह अंहकार दो जिसमें हम अपना आपा तुमको कह सकें, मनमें तुम्हारा शिव संकल्प उठे, चित्त में तुम्हारा ही चिन्तन रहे, हमारे नेत्र और हृदय खुले हों, और उनपर तुम्हारा पूरा अधिकार हो। हमारे सब के द्वारा केवल आप की जय हो, आप हमारे जीवन के नियन्ता प्राण स्वरूप हो। हे स्वामिन! हमारी प्रत्येक क्रियायें और चेष्टायें आपके चरणों में समर्पण होवें। हमारे भाव महान् उदार तथा गम्भीर हों। हम सब प्राणी मात्र को अपना ही आत्म स्वरूप देखें। और सबकी भलाई में अपनी भलाई समझें, अहर्निश परोपकार में रत रहें, और तुम्हारी ही भक्ति का सर्वत्र प्रचार करते हुये, अपने जीवन को सफल करते हुये, तुम्हारे पवित्र ज्योतिर्मय चरणों के समीप बैठने के योग्य बनें। हे पतितपावन! दीनों के उद्धार करने वाले परमात्मन् हमको ऐसी उदार बुद्धि दीजिये कि जिससे हम दीन दुखियों की सहायता सच्चे हार्दिक

भाव से करें। हमें तुम्हारे प्रेम में ही जीवन प्रिय हो। हे विश्वात्मा ! विश्वस्वरूप !! हम तुम्हारे भक्ति मार्ग पर चलते हुये महान् दुःखों को भी सानन्द सहन कर सकें, तुम्हारे भजन में दृढ़ रहें, सबके साथ पवित्र प्रेम करें। हे प्रेमाकर ! हम सबको अपना ही आत्मा जानें, हमारा आचरण सबकी भलाई के लिये हो। हे अनन्त शक्ति परमात्मन् ! आपकी शक्तियें अपरिमित वे अन्दाज हैं, तुम्हारी दात से कोई बढ़ नहीं सकता है। तुम्हारी दक्षिणा ज्योति की तरह सबके ऊपर जगमगा रही है। तुम्हारी शक्तियों और सच्चे उदार वचनों, मेहरवानियों का कोई नियन्ता नहीं है। कोई नहीं कह सकता कि उसने मुझे नहीं दिया है। तुम्हारे द्वारसे कोई निराश नहीं गया है। सबने अभीष्ट फल प्राप्त कर जीवन का फल पाया है। हे ! राम कृष्ण आदि अनन्त नामों और रूपों के धारण करने वाले, हमारे सच्चे प्रभु, अन्त में हमारी यही प्रार्थना है, कि हम तेरे सच्चे भक्त बनें, तेरी ही भक्ति का प्रचार करें, हम सब के द्वारा तुम्हारी ही इच्छा पूर्ण हो, सर्वत्र तुम्हारा ही राज हो। हे अनन्त अपार ज्ञानानन्द स्वरूप। आपको हमारा अनन्त धन्यवाद हो और आपका हमको आशीर्वाद हो। अतएव साञ्जली बद्ध आपको भूयापि नमस्कारों पर नमस्कार है। ॥ ओ३म् शंकरोतु शंकरः ॥

* सूचीपत्र *

विषय			पृष्ठ संख्या
मंगलाचरण	...	...	१
शिवोऽस्तुति	...	...	२
गुरोरष्टकं	...	...	३
गुरु भक्ति दोहे	...	...	५ से १४
गुरु भक्ति चौपाई	...	...	१४ से १६
नाम की महिमा	...	...	१६ से २४
चौपाइयां	...	...	२४ से ३१
योग व ज्ञान सम्बन्धी दोहे		...	३१ से ४०
सत्संग महिमा	...	...	४० से ४६
भिन्न २ विषय के दोहे	...	...	४६ से ६८
सोरठा, सवैया, कवित्त, पद, छन्द इत्यादि			६८ से ९५
शब्द, भजन, ग़ज़ल इत्यादि		...	९५ से १३७
गोविन्दाष्टक व छन्द	...	...	१३८ से १४१

ओ३म्

॥ हरि ओ३म् तत्सत् परब्रह्म परमात्मने नमः ॥

सार संग्रह

श्लोक ।

विघ्नेशं विघ्नहर्तारं, गणराजं गजाननम् ।
शारदां वरदां नौमि, बुद्धी जाड्यापनुत्तये ॥ १ ॥

दोहे ।

सदा भवानी दाहिनी, सन्मुख रहत गणेश ।
पांच देव रक्षा करें, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ १ ॥
नमो नमो गोबिन्द गुरु, बिनवौं अभिजन सोय ।
पहले भये प्रणाम तिन, नमो जो आगे होय ॥ २ ॥
नमो नमो श्रीरामजू, सत चित आनन्द रूप ।
जेहि जानत जग स्वप्नवत, नाशत भ्रम तम कूप ॥ ३ ॥
बन्दौं सन्त समान चित, हित अनहित नहिं कोय ।
अञ्जलि गति शुभ सुमन जिमि, सम सुगन्ध कर दोय ॥४॥

श्लोक ।

शम्भुरीशः पशुपतिः शिव शूली महेश्वरः ।
ईश्वरः सर्व ईशानः शंकरश्चन्द्रशेखरः ॥ १ ॥

भूतेशः खण्ड परशुर्गिरिशो गिरिशो मृडः ।
मृत्युंजय कृत्ति वासः पिनाकी प्रमथाधिपः ॥ २ ॥

उग्रः कपर्दी श्रीकण्ठः शिति कण्ठः कपाल भृत् ।
वामदेवो महादेवो विरू पाक्षस्त्रिलोचनः ॥ ३ ॥

कृशाणु रेताः सर्वज्ञो धूर्जटीर्नील लोहितः ।
हरः स्मर हरो भर्ग स्त्र्यम्बकस्त्रि पुरान्तकः ॥ ४ ॥

गंगाधरोऽन्धकरिपुः क्रतुध्वंसी वृषध्वजः ।
व्योम केशो भवो भीमः स्थाणु रुद्र उमापतिः ॥ ५ ॥

श्लोक ।

उमा कात्यायनी गौरी काली हैमवती श्वरी ।
शिवा भवानी रुद्राणी शर्वाणि सर्व मङ्गला ॥ १ ॥
अपर्णा पार्वति दुर्गा मृडानी चन्डि कांबिका ।
आर्या दाक्षायणी चैव गिरिजा मेनाकात्मजा ॥ २ ॥

श्लोक ।

हकारः शिव रुपेण, सकार श्शक्ति रुच्यते ।
हंस हंसेति यो ब्रूयात्, जीवो जपति सर्वदा ॥ १ ॥

दोहे ।

उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीति ।
जानु पाणि युग जोर कर, बिनती करहुं सुप्रीति ॥ १ ॥
जड़ चेतन जग जीव जे, सकल राममय जान ।
बन्दौं सब के पद कमल, सदा जोरि युग पान ॥ २ ॥
देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गन्धर्ब ।
बन्दौं किन्नर रजनीचर, कृपा करहु, अब सर्ब ॥ ३ ॥
मैं अपराधी जन्म का, नख शिख भरा विकार ।
तू दाता दुःखभञ्जना, मेरी करो सँभार ॥ ४ ॥

गुरोरष्टकं ।

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं धनं मेरु तुल्यम् । गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥ १ ॥

कलत्रं धनं पुत्र पौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः सर्वमेतद्धि जातम् । गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किम्० ॥ २ ॥

षडांगादि वेदो मुखे शास्त्र विद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ३ ॥

क्षमा मन्डले भूप भूपाल वृन्दैः सदा सेवितं यस्य पादार विंदम् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ४ ॥

यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापात् जगद्वस्तु सर्वं करे यत् प्रसादात् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ५ ॥

न भोगे न योगे न वावाजि राजौ न कान्ता मुखे नैव वित्तेषु चित्तम् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ६ ॥

अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ७ ॥

अनर्घ्याणि रत्नानि भुक्तानि सम्यक्समालिंगिता कामिनी यामिनीषु । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ८ ॥

गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्य देही यतिर्भूपति ब्रह्मचारी च गेही । लभेद्वांछि तार्थं ब्रह्म संज्ञं गुरो रुक्त वाक्ये मनो यस्य लग्नंम् ॥ ९ ॥

गुरु भक्ति ।

श्लोक--अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरं ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥ १ ॥

दोहे ।

सब धरती कागज करूं, लेखनि सब वनराय ।
सात सिन्धु की मसि करूं, गुरु गुण लिखा न जाय ॥१ ॥

भक्ति दान मोहि दीजिये, गुरु देवन के देव ।
और कछु नहीं चाहिये, निशि दिन तेरी सेव ॥ २ ॥

एक शब्द गुरु देव का, जाका अनन्त विचार ।
पण्डित थाके मुनि जना, वेद न पावे पार ॥ ३ ॥

या दुनिया दो रोज की, मत कर यासे हेत ।
गुरु चरणन से लागिये, जो पूरण सुख देत ॥ ४ ॥

सेज बिछावे सुन्दरी, अन्तर परदा होय ।
तन सौंपे मन दे नहीं, सदा दुहागिन होय ॥ ५ ॥

जाके हिरदे गुरु नहीं, शिष शाखा की भूख ।
जोनर ऐसा सूखसी, ज्यों वन दाझा रूख ॥ ६ ॥

गुरु गोबिन्द दोउ एक हैं, दूजा सब आकार ।
आपा मेटें हरि भजे, तब पावे करतार ॥ ७ ॥

गुरु समान दाता नहीं, याचक शिष्य समान।
तीन लोक की सम्पदा, सो गुरु दीनी दान ॥ ८ ॥
गुरू नाम है ज्ञान का, शिष्य सीख ले सोय।
बिन पदई मर्याद बिन, गुरू शिष्य नहिं होय ॥ ९ ॥
परमेश्वर अरु गुरू ये, दोनों एक समान।
सुन्दर कहत विशेष यह, गुरु ते पावें ज्ञान ॥ १० ॥
गुरु धोबी शिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार।
सुरत सिला पर धोइये, निकसे रङ्ग अपार ॥ ११ ॥
तीरथ न्हाये एक फल, सन्त मिले फल चार।
सत्गुरु मिले अनेक फल, कहे कबीर विचार ॥ १२ ॥
कबीर ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रुठे गुरु में लखे, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥ १३ ॥
भेदी लीना साथ में, दीनी वस्तु लखाय।
कोटि जन्म का पन्थ था, पलमें पहुंचा जाय ॥ १४ ॥
कबीर शिष्य को चाहिये, गुरु को सरवस देय।
गुरु को ऐसा चाहिये, शिष्य का कछू न लेय ॥ १५ ॥
जैसी लव पहिले लगी, तैसी निबहे ओड़।
अपने तन की को गिने, तारे पुरुष किरोड़ ॥ १६ ॥

सही टेक है तासु की, जाके सत्गुरु टेक।
टेक निवाहें देह भर, रहे शब्द मिल एक ॥ १७ ॥
कै खाना कै सोवना, और न कोई चीत।
सत्गुरु शब्द विसारिया, आदि अन्त का मीत ॥ १८ ॥
ओछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत।
अब पछतावा क्या करें, चिड़ियां खाया खेत ॥ १९ ॥
कबीर गुरु की भक्ति बिन, नारि कूकरी होय।
गली २ भूसत फिरे, टूक न डारे कोय ॥ २० ॥
कबीर यह तन जात है, सके तो ठौर लगाय।
कै सेवा कर साधु की, कै गुरु के गुन गाय ॥ २१ ॥
उज्ज्वल पहने कापड़ा, पान सुपारी खाय।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, बांधा यमपुर जाय ॥ २२ ॥
ईश्वर ते गुरु में अधिक, धारे भक्ति सुजान।
बिन गुरु भक्ति प्रवीण हू, लहैं न आतम ज्ञान ॥ २३ ॥
हरि रूठे कछु डर नहीं, तू भी दे छिटकाय।
गुरु को राखे सीस पर, सब विधि करे सहाय ॥ २४ ॥
मात तात भ्राता सुहृद, इष्ट देव नृप प्राण।
अनाथ सुगुरु सब ते अधिक, दान ज्ञान विज्ञान ॥ २५ ॥

वेद उदधि विन गुरु लखे, लागै लोन समान ।
बादर गुरु मुख द्वार है, अमृत से अधिकान ॥ २६ ॥
ऐसा दृढ़ विश्वास कर, तरे जो जीव अनेक ।
गुरू नाम है ज्ञान का, शिष्य टेक गहे एक ॥ २७ ॥
कबीर मन तो एक है, भावे तहां लगाय ।
भावे गुरु की भक्ति कर, भावे विषय कमाय ॥ २८ ॥
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोई साध ।
जो माने गुरु वचन को, ताका मता अगाध ॥ २९ ॥
शिष शाषा बहुतै किया, सत्गुरु किया न मित्त ।
चाले ते सतलोक को, बीचहि अटका चित्त ॥ ३० ॥
बड़े बड़ाई पाय कर, रोम २ अहँकार ।
सत्गुरु के परचे बिना, चारों बरन चमार ॥ ३१ ॥
सत्य नाव पर जो चढ़त, यह भव सिन्धु अपार ।
आप बचे अरु और को, देवे पार उतार ॥ ३२ ॥
सहजो गुरु दीपक दियो, नैना भये अनन्त ।
आदि अन्त मध्य एक हों, सूझ परे भगवन्त ॥ ३३ ॥
ब्रह्म रूप अहि ब्रह्म वित, ताकी वाणी वेद ।
भाषा अथवा संस्कृत, करत भेद भ्रम छेद ॥ ३४ ॥

जिमि चन्द्रहिं लहि चन्द्रमणि, अमी द्रवत तत्काल ।
गुरु मुख निरखत शिष्य के, अनुभव होत विशाल ॥ ३५ ॥
गुरु विनु भ्रम लगि भूसिये, भेद लिये विनु खान ।
केहरि वपु छाया निरखि, पर्‌यो कूप अज्ञान ॥ ३६ ॥
सहजो कारज जगत के, गुरु बिन पूरे नाहिं ।
हरि तो गुरु बिन क्यों मिले, समझ देख मन माहिं ॥३७॥
परमेश्वर सूं गुरु बड़े, गावत वेद पुरान ।
सहजो हरिके भक्ति है, गुरु के घर भगवान ॥ ३८ ॥
अष्टादश और चार षट, पढ़ पढ़ अर्थ कराहिं ।
भेद न पावे गुरु बिना, सहजो सब भर माहिं ॥ ३९ ॥
सकल विकल सब छोड़ कर, गुरु चरणन चित लाय ।
सहजो निहचै हर जपो, बहुर न ऐसो दाव ॥ ४० ॥
सहजो सतगुरु के मिले, भये और सूं और ।
काग पलट गति हंस होय, पाई भूली ठौर ॥ ४१ ॥
सहजो गुरु ऐसो मिले, सम दृष्टि निर्लोभ ।
शिष को प्रेम समुद्र में, करदे झोबा झोब ॥ ४२ ॥
सहजो गुरु बहुतक फिरें, ज्ञान ध्यान सुधि नाहिं ।
तार सकें नहिं एक को, गहें बहुत की बांह ॥ ४३ ॥

अठ सठ तीरथ गुरु चरण, पर्वी होत अखन्ड ।
सहजो ऐसो धामना, सकल अन्ड ब्रह्मन्ड ॥ ४४ ॥
गुरु आज्ञा दृढ़ कर गहे, गुरु मति सहजो चाल ।
रोम रोम गुरु को रटै, सो शिष्य होय निहाल ॥ ४५ ॥
गुरु आज्ञा माने नहीं, गुरुहि लगावें दोष ।
गुरु निन्दक जग में दुखी, मुये न पावहिं मोष ॥ ४६ ॥
गुरू वचन हिय लै धरो, ज्यों कृपण के दाम ।
भूमि गढ़े माथे दिये, सहजो लहै न राम ॥ ४७ ॥
ऐसे तो गुरु बहुत हैं, धूत धूत धन लेहिं ।
सहजो सत्गुरु जो मिले, भक्ति धाम फल देहि ॥ ४८ ॥
बार बार नाते मिले, लख चौरासी मांह ।
सहजो सत्गुरु ना मिले, पकर निकासे बांह ॥ ४९ ॥
सहजो गुरु दर्शन दियो, पूरि रहें सब ठौर ।
जहां तहां गुरुहि लखै, दृष्टि न आवे और ॥ ५० ॥
साधु मिले गुरु पाइयां, मिट गये सब सन्देह ।
सहजो को सब होगयो, कह गिरधर कह गेह ॥ ५१ ॥
सहजो गुरू प्रसन्न हो, मूंद लिये दो नैन ।
फिर मोसूं ऐसे कहो, समझ लेउ यह सैन ॥ ५२ ॥

चींटी जहां न चढ़ सके, सरसों ना ठहराय।
सहजो को वा देश में, सत्गुरु दई बसाय ॥ ५३ ॥
जब सत्गुरु कृपा करैं, खोल दिखावे नैन।
जग झूठा दीखन लगे, देह परे की सैन ॥ ५४ ॥

श्लोक ।

न गुरोः सदृशी माता, न गुरोः सदृशी पिता।
य स्तारयति संघोरं, संसाराब्धिं सुदुस्तरम् ॥ १ ॥

दोहे ।

लौ लागी तब जानिये, छूट न कबहूं जाय।
जीवत लौ लागी रहै, मूये माहिं समाय ॥ १ ॥
लौ लागी कल ना पड़े, आप विसरजन देह।
अमृत पीवे आत्मा, गुरु से जुड़े सनेह ॥ २ ॥
जैसी लव पहिले लगी, तैसी निबहे ओर।
अपनी देह की को गिने, तारे पुरुष करोर ॥ ३ ॥
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे गृह में बास कर, भावे बन में जाय ॥ ४ ॥
प्रेम प्याला भर पिया, राच रहे गुरु ज्ञान।
दिया नगाड़ा प्रेम का, लाल खड़े मैदान ॥ ५ ॥

और सुरत बिसरी सकल, लौ लागी रहे सङ्ग।
आव जाव कासों कहूं, मनराता गुरु रङ्ग ॥ ६ ॥
पतिव्रता के एक है, व्यभिचारिन के दोय।
पतिव्रता व्यभिचारिनी, कहो क्यों कर मेला होय ॥ ७ ॥
पिञ्जर प्रेम प्रकाशिया, जागी ज्योति अनन्त।
संशय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कन्त ॥ ८ ॥
राता माता नाम का, पीया प्रेम अघाय।
मतवाला दीदार का, मांगै मुक्ति बलाय ॥ ९ ॥
प्रेमी को ऋणियां रहौं, यही हमारो सूल।
चारि मुक्ति दई ब्याज में, दे न सको अब मूल ॥ १० ॥
प्रेम न बाड़ी ऊपजे, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा प्रजा जो रुचे, शीश दिये ले जाय ॥ ११ ॥
क्षण उतरे क्षण में चढ़े, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम लाग्यो रहे, प्रेम कहावे सोय ॥ १२ ॥
बेल होत वर्षा विषे, करत वृक्ष से प्रीति।
प्राण गये छाड़े नहीं, अपनी उत्तम रीति ॥ १३ ॥
प्रेमी ढूंढत मैं फिरूं, प्रेमी मिले न कोय।
प्रेमी सों प्रेमी मिले, गुरू भक्ति दृढ़ होय ॥ १४ ॥

प्रेम बिना धीरज नहीं, बिरह बिना वैराग ।
सत्गुरु बिना मिटे नहीं, मन मनसा का दाग ॥ १५ ॥
योगी जङ्गम सेवड़ा, संन्यासी दुरवेश ।
बिना प्रेम पहुंचे नहीं, दुर्लभ सत्गुरु देश ॥ १६ ॥
जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं ।
प्रेम गली अति सांकरी, तामें दो न समांहिं ॥ १७ ॥
नैनों की कर कोठरी, पुतली पलँग बिछाय ।
पलकों की चिक डाल के, पिया को लिया रिझाय ॥१८॥
कथनी के सूरे घने, थोथे बाधें तीर ।
प्रेम चोट जिनके लगे, तिनके विकल शरीर ॥ १९ ॥
प्रीति बहुत संसार में, नाना विधि की सोय ।
उत्तम प्रीत सो जानिये, जो सद्गुरु से होय ॥ २० ॥
जहां बाज बासा करे, पक्षी रहे न और ।
जिस घट प्रेम अघट भया, नहीं कर्म को ठौर ॥ २१ ॥
ऊंचे उज्ज्वल भाग सों, आप मिले गुरु देव ।
प्रेम दिया नन्हा किया, पूरण पायो भेव ॥ २२ ॥
प्रेम दिवाने जो भये, मन भयो चकनाचूर ।
छके रहें घूमत रहें, सहजो देख हजूर ॥ २३ ॥

हंसा सो हंतार कर, सुरति मकरिया पोय।
उतर २ फिर फिर चढ़े, सहजो समरन होय ॥ २४ ॥

चौपाई।

बन्दौ गुरु पद पद्म परागा । सुरचि सुवास सरस अनुरागा।
मन से प्रेम राम सम राखे। ह्वै प्रसन्न गुरु इमि अभिलाखे ॥
तन करि बहु सेवा बिस्तारे। आज्ञा गुरु की कबहुं न टारे ॥
गुरु बिन ब्रह्म नहीं नर पावे। गुरु बिन तत्त्व कोन दर्शावे ॥
दोष दृष्टि स्वप्ने नहिं आने। हरि हर ब्रह्म गङ्ग रवि जाने ॥
गुरुबिनभवनिधितरै न कोई। जो बिरञ्चि शंकर सम होई ॥
नैनखबे जलनिजहित लागी। जरे न पावे देह बिरागी ॥
कहैं सत्यप्रिय बचनविचारी। जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥
जननी जनक गुरुबन्धु हमारे। कृपानिधान प्राण ते प्यारे ॥
मानोकुटिल कुभाग्यकुजाती। गुरु कर द्रोह करौं दिन राती ॥
जे शठ गुरु सेन ईर्षा करहीं। रौरव नरक कल्पशत परहीं ॥
सद्गुरु ज्ञानविराग योग के। विबुध वैद्य भव भीम रोग के ॥
गुरुके वचन प्र ीत न जेही। स्वप्नेहु सुगम नसुखसिधितेही ॥
गुरुका बदला दिया न जाई। मन में उपजत है सकुचाई ॥
शेष सहस्रमुखनिशिदिनगावे। गुरु स्तुति का अन्त न पावे ॥

गुरु के प्रेम पन्थ सिर दीजै । आगा पीछा कबहुं न कीजै ॥
गुरु के पन्थ होय सो होई । मारग आन चलो मत कोई ॥
गुरु के पन्थ पैज का पूरा । गुरु के पन्थ चले सोई शूरा ॥
गुरु के पन्थ भक्ति उजियारा । गुरु के पन्थ नहीं संसारा ॥
गुरु के पन्थ चले सतवादी । सहजो पावे भेद अनादी ॥
गुरुकेचरण भक्ति फलदायक । सहजो गुरु के चरण सहायक ॥
गुरु पग परसे बन्धन छूटे । मोह ममता की फांसी टूटे ॥
गुरुकी आज्ञा दृढ़ कर गहिये । गुरु की आज्ञा ही में रहिये ॥
गुरुआज्ञा बिन काज न कीजै । हानि होय तो होने दीजै ॥
गुरु की आज्ञा विघ्न न होई । गुरु की आज्ञा गुरु मुख कोई ॥
गुरुकीआज्ञा सकल शिरोमन । गुरु की आज्ञा चलै सु हरजन
जो कोई गुरु की आज्ञा भूलै । फिर २ कष्ट गर्भ में झूलै ॥
गुरुके वचन हिये बिच धारो । गुरुमुख गुरुके शब्द सम्हारो ॥
गुरु के शब्द प्रेम उलझावे । गुरु शब्दां हरि आन मिलावे ॥
गुरुके शब्द राह सोई चलना । वेद पुराण कहा लै करना ॥
चरणदास गुरु शब्द तुम्हारे । हमरे भरम फन्द सब जारे ॥
गुण सब गुरुके चरणों माहीं । सहजो शिष सो बिसरे नाहीं ॥
चरणदास गुरु आज्ञा पूरी । बिन आज्ञा करनी सब कूरी ॥

राम तजूं पै गुरु न विसारूं । गुरु के सम हरिको न निहारूं ॥
हरिने जन्म दियोजग माहीं । गुरुने आवा गमन छुटाहीं ॥
हरिने पांच चार दिये साथा । गुरु ने लई छुड़ाय अनाथा ॥
हरि ने कुटम्ब जाल में गेरी । गुरु ने काटी ममता बेरी ॥
हरिने करम भरम भरमायो । गुरु ने आतम रूप लखायो ॥
हरिने मोसूं आप छिपायो । गुरु दीपक दे ताहि दिखायो ॥

नाम की महिमा ।

दोहे ।

ब्रह्म रामते नाम बड़, बरदायक बरदान ।
रामायण शत कोटि में, लिये महेश जिय जान ॥ १ ॥

तुलसी अपने राम को, रीझ भजो चाहे खीज ।
उलटा सीधा जामिये, पड़े खेत में बीज ॥ २ ॥

राम रत्न धन मुज्झ में, खान खुली घट माहिं ।
सेतमेत ही देत हूं, गाहक कोई नाहिं ॥ ३ ॥

जब गुण का गाहक मिले, तब गुण लाख बिकाय ।
जब गुण का गाहक नहीं, तब कौड़ी बदले जाय ॥ ४ ॥

हाथी घोड़ा धन घना, चन्द्रमुखी बहु नार ।
नाम बिना यमलोक में, पावे दुःख अपार ॥ ५ ॥

सुरता माहीं जप करे, तन सूं न्यारे जौन ।
मिले सच्चिदानन्द में, गहे रहै जो मौन ॥ ६ ॥
काऊ के धन माल है, काऊ के परिवार ।
तुलसीदास ग़रीब के, राम नाम आधार ॥ ७ ॥
हिय में हरि हेरो नहीं, हेरत फिरो जहान ।
ज्यों निज में मृग मूल मद, खोजत गहन अजान ॥ ८ ॥
रन बन व्याधि विपत्ति में, वृथा डरै जन कोय ।
जो रक्षक जननी जठर, सो हरि गया न सोय ॥ ९ ॥
मनुज देह प्रापत भयो, सब प्रापत को मूल ।
जामें हरि प्रापत नहीं, सब प्रापत में धूल ॥ १० ॥
मनका फेरत जुग गया, गया न मनका फेर ।
करका मनका छांड़ि के, मनका मनका फेर ॥ ११ ॥
तन थिर मन थिर वचन थिर, सुरत निरत थिर होय ।
कबीर ऐसे पल को, कल्प न पावे कोय ॥ १२ ॥
सुमिरन की सुध यों करो, जैसे दाम कँगाल ।
कहे कबीर बिसरे नहीं, पल २ लेय सँभाल ॥ १३ ॥
सुख के माथे सिल पड़ो, जो नाम हृदय से जाय ।
बलिहारी वा दुःख की, जो पल २ राम कहाय ॥ १४ ॥

हम तुम्हरो सुमिरन करें, तुम चितवत मोहि माहिं।
सुमिरन मन की प्रीति है, सो मन तुम ही माहिं ॥ १५ ॥
भाग्यहीन मानुष वही, जन्म हुआ बरबाद।
मानुष तन को पाय जिन, शंकर किया न याद ॥ १६ ॥
भव सागर के तरण का, सोधा यही उपाय।
महादेव के भजन में, चित्त मगन होजाय ॥ १७ ॥
सोई सुखी संसार में, जो सुमिरे भगवान।
राग द्वेष जाके नहीं, सोई चतुर सुजान ॥ १८ ॥
शिव शिव शिव शिव रटन कर, छोड़ जगत जञ्जाल।
अन्तकाल शङ्कर बिना, सङ्ग न जावे लाल ॥ १९ ॥
शिव शिव शिव शिव रटन कर, जो चाहत कल्यान।
जन्म मरण के दुःख का, वैद्य न शम्भु समान ॥ २० ॥
तुलसी रा के कहत ही, निकसत पाप पहार।
फिर आवन पावत नहीं, देत मकार किवार ॥ २१ ॥
राम नाम मणि दीप धर, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरो, जो चाहे उजियार ॥ २२ ॥
नाम चतुर्गुण पञ्चयुत, दुगुण करत वसु शेष।
तुलसी सचराचर बसे, राम नाम युत पेष ॥ २३ ॥

ज्ञानी सोऽहँ कहत हैं, योगी जन ओंकार।
भक्त राम को भजत हैं, साधो करो विचार ॥ २४ ॥
हरि सेवा वर्षों तलक, गुरु सेवा पल चार।
चार वेद पढ़ सो दफै, राम नाम इकबार ॥ २५ ॥
नाम लिया जिन सब लिया, चार वेद का भेद।
नाम बिना पच पच मरे, पढ़ पढ़ चारों वेद ॥ २६ ॥
मोक्ष मुक्ति तुम चहत हो, तजो कामना काम।
मन की इच्छा मेटि कर, भजो निरञ्जन राम ॥ २७ ॥
अधि की ऊंचा नाम है, सब करणी का जीव।
अष्टादश अरु चार का, मथ कर काढ़ा घीव ॥ २८ ॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील सन्तोष।
इनको ले सुमिरन करे, निश्चय पावे मोक्ष ॥ २९ ॥
ब्रह्म हत्या अरु नारि की, बालक हत्या होय।
राम नाम जो मन बसे, सब को डारे खोय ॥ ३० ॥
नाभि नासिका माहिं कर, सोऽहं सोऽहं जाप।
सो ही अजपा जाप है, छुटे पुण्य अरु पाप ॥ ३१ ॥
स्वांसों से सोऽहं भयो, सोऽहं से ओंकार।
ओंकार से र रा भयो, साधो करो विचार ॥ ३२ ।

तुलसी रसना तो भली, जो तू सुमिरे राम।
नातर काट निकासिये, मुख में भलो न चाम ॥ ३३ ॥
दादू सिरजनहार के, केते नाम अनन्त।
मन आवे सोई लीजिये, साधू सुमिरे सन्त ॥ ३४ ॥
एक मुहूरत मन रहे, नाम निरञ्जन पास।
दादू तब ही जानिये, सकल कर्म का नास ॥ ३५ ॥
कबीर राम नाम के लेत ही, होत पाप का नास।
ज्यों चिनगारी आग की, पड़े पुराने घास ॥ ३६ ॥
स्वासों की कर सुमिरनी, अजपा का कर जाप।
ब्रह्म तत्त्व का ध्यान धर, सोऽहं आपहि आप ॥ ३७ ॥
राम नाम जग सार है, मोमन राम सुजान।
राम नाम बिसरो नहीं, जब लग घट में प्रान ॥ ३८ ॥
राम नाम की लूट है, लूटी जाय तो लूट।
अन्त काल पछतायगा, प्राण जायँगे छूट ॥ ३९ ॥
तुलसी या संसार में, कर लीजे दो काम।
देने को टुकड़ा भला, लेने को हरि नाम ॥ ४० ॥
राम नाम रटते रहो, जब लग घट में प्रान।
कबहुंक दीनानाथ के, भनक पड़ेगी कान ॥ ४१ ॥

राम झरोका बैठ के, सब का मुजरा लेय।
जैसी जाकी चाकरी, तैसा ही फल देय ॥ ४२ ॥
सुपने में बरड़ाय के, मुख से बोले राम।
वाके पग की पावड़ी, मेरे तनका चाम ॥ ४३ ॥
वारि मथे वरु होय घृत, सिक ताते वरु तेल।
बिन हरि भजन न भव तरहि, यह सिद्धान्त अपेल ॥ ४४ ॥
सुन्दर सत्गुरु यों कहो, सकल शिरोमणि नाम।
ताको निशि दिन सुमिरिये, सुखसागर सुखधाम ॥ ४५ ॥
दादू नीका नाम है, आप कहे समझाय।
और आरम्भ सो छोड़कर हरिजी से चित लाय ॥ ४६ ॥
आयो प्रभु शरणागति, कृपासिन्धु दयाल।
एक अक्षर हर मन बसे, नानक होत निहाल ॥ ४७ ॥
दो बातन को भूल मत, जो चाहत कल्यान।
नारायण इक मौत को, दूजे श्रीभगवान ॥ ४८ ॥
तुलसी विलम न कीजिये, भजिये राम सुजान।
जगत मजूरी देत है, क्यों राखे भगवान ॥ ४९ ॥
स्वांस स्वांस में हरि भजो, वृथा स्वांस मत खोय।
ना जानू या स्वांस का, आवन होय न होय ॥ ५० ॥

जितना हेत हराम में, इतना हरि से होय।
चला जाय वैकुण्ठ को, पल्ला पकड़े न कोय॥ ५१॥
वेर २ नहिं पाइये, सुन्दर मनुष देह।
राम भजन सेवा सुकृत, ये सौदा कर लेय॥ ५२॥
कबीर सोई मुख धन्य है, जिहि मुख निकसे राम।
देही किस की बापुरी, पवित्र हो है ग्राम॥ ५३॥
कलियुग सम युग आन नहिं, जो नर करहिं विश्वास।
गाइ राम गुण गण बिमल, भव तर बिनय प्रयास॥ ५४॥
विन विश्वास भक्ति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
राम कृपा विन स्वप्न हूं, मन न लहै विश्राम॥ ५५॥
जासु नाम भव भेषज, हरण ताप त्रय शूल।
सो कृपाल मोहिं तोहिं पर, सदा रहहिं अनुकूल॥ ५६॥
सहजो भज हरि नाम को, तजो जगत सूं नेह।
अपना कोई है नहीं, अपनी सगी न देह॥ ५७॥
जामें जाकी प्रीति हो, रटिये वारम्बार।
सब देवन का नाम बल, धरे शेष भू भार॥ ५८॥
अजामेल धोखे लियो, जाने सब संसार।
बाल्मीक भये ब्रह्म सम, उलटो नाम विचार॥ ५९॥

चौपाई ।

नाम निपुण अरु नाम यतन ते । सो प्रगटत जिमि मोलरतनते ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भक्त शिरोमणि भये प्रहलादू ॥
साधक नाम जपहि लौ लाये । होय सिद्धफल मादिक पाये ॥
ब्रह्म सुखहिं अनुभवहिं अनूपा । अकथ अनाम नाम नहिं रूपा ॥
जाना चहिहं गूढ़ मति जेहू । नाम जीह जपि जानहिं जेहू ॥
ध्रुव सग्लानि जपेउ हरिनामू । पायउ अचल अनूपम ठामू ॥
अपरअजामिलगज गणिकाऊ । भये मुक्ति हरि नाम प्रभाऊ ॥
महामंत्र मणि विषय व्यालके । मेटत कठिन कुअङ्क भाल के ॥
रामभजनविघ्नमिटहि नकामा । थलविहीनतरुकवहुं किजामा ॥
हानिकिजग यहिसमकुछुभाई । भजिय न रामहिं नरतनु पाई ॥
कलियुगकेवल हरिगुणगाहा । गावत नर पावहिं भव थाहा ॥
देखिये रूप नाम आधीना । रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना ॥
नाम रूप दोउ ईश उपाधी । अकथअनादिसुसामुझसाधी ॥
उभय अगम युगसुगमनाम ते । कहूं नाम बड़ ब्रह्म राम ते ॥
कहूं कहां लग नाम बड़ाई । राम न सकेहि नामगुण गाई ॥
रामनामकलि अभिमत दाता । हितपरलोक लोक पितुमाता ॥

पद ।

क्या द्विजाति क्या शूद्र ईश को, वेश्या भी भज सकती है।
श्वपचों को भी भक्ति भाव में, शुचिता कब तज सकती है॥
अनुभव से कहता हूं, मैंने उसे कर लिया है वश में।
जो चाहे सो पिये प्रेम से, अमृत भरा है इस रस में॥

चौपाई ।

अहं ब्रह्म जौ लौं नहिं जाने । तौलौं दीन दुखित भय माने॥
हरि चितवे सो सांची बात । औरन सों नहिं टूटे पात॥
जो कुछ चाहे सोउन करे । अब चाहे सो भी सब सरे॥
चाहे बिन बादल वर्षावे । बिनसूरज दिनकर दिखलावे॥
चाहे गूङ्गे को वेद पढ़ावे । अंधरे आँखे खोल दिखावे॥
नर की छाती दूध निकासै । उपजावै वह खेत अकासै॥
खाली भरे भरे निबटावे । जो चाहे सोई प्रगटावे॥
अग्नि माहिं तृण तरु उपजावै । घटमें सागर सिन्धु समावै॥
सुई के नाके हस्ती काढ़ै । मूल पात बिन लकड़ी बाढ़ै॥
पावक राखै पानी माहीं । जल राखै जहां धरती नाहीं॥
गिरिवर सागर माहिं तिरावे । चाहे हलका काठ डुबावे॥

रङ्कन कूं करे छत्रधारी । चाहे भूपन देय उजारी ॥
चाहे जल का थल कर डारे । राई कूं पर्वत कर भारे ।
जो चाहै सो आपहि करे । औरन के सिर झंठे धरे ॥
जो मोपर प्रसन्न सुखरासी । जानिये सत्य मोयनिजदासी ॥
शारद दारु नारि सम स्वामी । राम सूत्रधर अन्तर्यामी ॥
माया जीव दोउ ते न्यारा । सो निज कहिये पीय हमारा ॥
जप तप योग यज्ञ व्रत दाना । विमल विराग ज्ञान विज्ञाना ॥
हठवश शठ बहु साधन करहिं । भक्तहीन भवसिन्धु न तरहिं ॥
एक यही जो झूंठ न बोले । सांच कहे तब हृदय तोले ॥

बन्दौ सन्त असज्जन चरणा । सुखप्रदउभयबीच कछुवरणा ॥
बिछुरत एक प्राण हर लेही । मिलत एक दारुण दुख देही ॥
आकर चारि लाख चौरासी । जातिजीवनभ जलथलवासी ॥
सिया राममय सब जग जानी । करौं प्रणाम सप्रेम सुबानी ॥
जे प्राकृत कवि परम सयाने । भाषाजिन हरिचरित बखाने ॥
भये जे अहहिं जे ह्वै हैं आगे । प्रणउं सबहि कपट छलत्यागे ॥
गुरु पित मात महेश भवानी । प्रणउं दीनबन्धुदिनसुखदानी ॥
शुकसनकादि व्यासमुनिनारद । जे मुनिवर विज्ञानविशारद ॥
प्रणउं सबहिं धरणिधरिशीशा । कृपाकरहुजन जानिमुनीशा ॥

जनकसुता जगजननी जानकी । अतिशयप्रियकरुणानिधानकी ॥
जयजयजय गिरिराजकिशोरी । जय महेश मुखचन्द्र चकोरी ॥
जय गजबदन खड़ानन माता । जगतजननिदामिनिद्युतिगाता॥
बन्दौ राम नाम रघुबर के । हेतु कृषानु भानु हिमकरके ॥
बेद पुराण सन्त मत एहू । सकल सुकृतफल रामसनेहू ॥
व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी । सत चेतन घन आनँदराशी ॥
असप्रभु अछतहृदय अविकारी । सकल जीव जग दीनदुखारी ॥
नाम निरूपण नाम यतन ते । सोप्रगटतजिमिमोल रतनते ॥
नहिँ असत्य सम पातक पुञ्जा । गिरिसमहोइकिकोटिकगुञ्जा ॥
लाख बात का एक ही जोड़ । सांचापुरुष सबन सिरमोड़ ॥
सांचे चोर चुराया घोड़ा । परमेश्वर ताका रङ्ग मोड़ा ॥
काहू की निन्दा नहिँ करिये । परकेऔगुणचित्तनहिंधरिये ॥
गुणअवगुण जानत सब कोई । जो जेहिभाव नीकतेहि सोई ॥
पर उपदेश कुशल बहुतेरे । जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥
अनहद बाजे अद्भुत खेल । दीपक जले बाती बिन तेल ॥
दीरघ तारा सा परकाशै । उदय होय सूरज ज्यौं भाषै ॥
जेहि का जेहिपर सत्य सनेहू । सो तिहि मिलै न कछु सन्देहू ॥
बिरह अनल तनुमूल समीरा । खांस जरे क्षणमाहिं शरीरा ॥

ब्रह्मज्ञान विन मिटे न दोई । ब्रह्मज्ञान विन मुक्त न होई ॥
दान यज्ञ तप नाना भोगा । ब्रह्मज्ञान बिन सब ही रोगा ॥
जो चितवे तो हरिगुरुचरणा । ब्रह्म विचार सदा ही करना ॥
जग रँग उतर ब्रह्मरँग लागै । जातै करम भरम भय भागै ॥
निजचरणनकमलनमहिंलोटे । मनसा करके पांइ पलोटे ॥
सेवक भाव कभी नहिं छोड़े । दिन २ प्रीति अधिक ही जोड़े ॥
पतिव्रतारहै जिमिपतिपासा । ऐसे स्वामी के ढिंग दासा ॥
नेक न पांव आन दिश धारे । जो पति कहै सो आज्ञा पारे ॥
सदा अखण्डित सेवा लावे । सोई भक्ति अनन्य कहावे ॥
जो आपन चाहहु कल्याना । सुयश सुमति शुभगति सुख नाना ॥
तो परनारि लिलार गुसाईं । तजौ चौथ चन्दा की नाईं ॥
विधिहरिहरकविकोविदवानी। कहत साधु महिमा सकुचानी ॥
भक्तिपक्ष हठ नहिं शठताई । दुष्ट तर्क सब दूर बिहाई ॥
श्रवणादिकनवभक्ति दृढ़ाई । मम लीला रति मति अधिकाई ॥
जाति पांतिकुलधर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुण चतुराई ॥
भक्तिहीन नर सोहत कैसे । बिन जल वारिद देखिय कैसे ॥
भक्तिवन्तअतिनीचहुं प्राणी । मोह परमप्रिय सुन ममवाणी ॥
मोरे प्रौढ तनय सम ज्ञानी । बालक सुतसम दास अमानी ॥

रामहिं केवल प्रेम पियारा । जान लेहु जो जानन हारा ॥
सन्तचरण पङ्कज अति प्रेमा । मन क्रमवचन भजन दृढ़नेमा ॥
भक्तियोग अब सुनहुं समाना । बुद्धि प्रवीणजू करों बखाना ॥
प्रथम ही पकरै दृढ़ बैरागा । गृह बिष आशवारेसबत्यागा ॥
माया मोह करै नहिं काहू । रहे सबन सों बेपरवाहू ॥
शील संतोष क्षमा उर धारे । धीरज समता दयाव्रत धारे ॥
मान महात्म कछू ना चाहे । एकै दशा सदा निर्बाहे ॥
राव रङ्क की शङ्क न माने । कीरी कुञ्जर सम कर जाने ॥
आत्म दृष्टि सकल संसारा । सन्तन को राखे अधिकारा ॥
बैर भाव काहू नहिं करई । सतगुरु शब्द हृदय में धरई ॥
सार ग्रह कूकस सब नाखै । रमता राम इष्ट सिर राखै ॥
आन देव की करे न सेवा । पूजे एक निरञ्जन देवा ॥
तन मन सकल समर्पण करई । दीन होय पुनि पाई न करई ॥
व्यापक ब्रह्म अखण्ड अनन्ता । अखिलअमोघ शक्तिभगवन्ता ॥
अगुण अदम्भ गिरा गोतीता । समदरशी अनवद्य अजीता ॥
निर्मम निराकार निर्मोहा । नित्य निरञ्जन सुख सन्दोहा ॥
प्रकृतिपार प्रभु सब उरवासी । ब्रह्मनिरीह विरज अविनाशी ॥
यहां मोहकर कारण नाहीं । रविसन्मुखतमकबहुंकिजाहीं॥

बिनु सन्तोष न काम नशाहीं । काम अछतसुखसपनेहुं नाहीं ॥
अग जग जीव नाग नर देवा । नाथ सकलजग कालकलेवा ॥
कबहुंकि दुखसबकरहितताके । तेहिकिदरिद्रपारसमणिजाके ॥
कामी पुनि कि रहै निकलङ्का । परद्रोही कि होइ निःशङ्का ॥
राज कि रहै नीति बिनु जाने । अघकिरहैहरिचरित बखाने ॥
भवकिपरहि परमारथ बिन्दक । सुखीकिहोइकबहुंपरनिन्दक ॥
लाभकि कछु हरिभक्त समाना । जेहिं गावहिं श्रुतिसन्तपुराना॥
नट कृत कपट बिकटखगराया । नट सेवकहिं न व्यापे माया ॥
पर उपकार वचन मन काया । सन्त सहज स्वभाव खगराया ॥
धन्य नारि पतिव्रत अनुसरी । धन्य सो देश जहां सुरसरी ॥
धन्य सो भूप नीति जो करई । धन्यसोद्विज निजधर्म न टरई ॥
कहहिंसुनहिं अनुमोदनकरहिं । तेगोपद इव भवनिधि तरहिं ॥
जासु पतितपावन बड़ बाना । गावहिंकविश्रुतिसन्तपुराना ॥
ताहि भजियतजिमनकुटिलाई । रामभजेहि गतिकेहिनहिंपाई॥
जिमिशिशुतनु ब्रणहोइगुसाईं । मातु चिराव कठिनकी नाईं ॥
संसृत मूल शूलप्रद नाना । सकलशोकदायक अभिमाना ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई । बिन महिगन्ध कि पावे कोई ॥
जे अपराध भक्त कर करिहिं । राम रोष पावक सो जरिहिं ॥

शुभ अरु अशुभ कर्म अनुहारी । ईश देत फल हृदय विचारी ॥
हानि कुसङ्ग सुसङ्गत लाहू । लोकहुवेद विदित सब काहू ॥
गगन चढ़े रज पवन प्रसङ्गा । कीचइमिली नीचजल सङ्गा ॥
साधु असाधुसदन शुकसारी । सुमरेहिंराम देहिंगण गारी ॥
धूम कुसङ्गत कारिख होई । लिखियपुराणमञ्जुमसि सोई ॥
सोईजल अनलअनिलसंघाता । होइ जलद जग जीवन दाता ॥
मतिअतिनीचऊंचरुचि आछी । चहियअमीजगजुरै न छाछी ॥
सज्जन सुकृत सिन्धुसम कोई । देखि पूर विधु बाढ़हिं जोई ॥
जे परभणित सुनत हर्षाहीं । ते वर पुरुष बहुत जग नाहीं ॥
जो बालक कह तोतरी बाता । सुनहिं मुदित मनपितुअरुमाता ॥
जेहिअवधेउव्याधजिमिवाली । फिरसुकएठसोईकीनकुचाली॥
सोई करतूत विभीषण केरी । स्वप्नेहु सो न राम हिय हेरी ॥
रहत न प्रभुचितचूक किये की । करतसुरतसोवार हिये की ॥
बरु पावक प्रगटे शशि माहीं । नारद वचन अन्यथा नाहीं ॥
मन हठ परा न सुने सिखावा । चहतवारिपर भीत उठावा ॥
नारद कहा सत्य सोई जाना । बिन पङ्खन हम चहें उड़ाना ॥
नारदसिखजो सुनहिंनरनारी । अवश्यभवनतजहोहिंभिखारी॥
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा । आपनिसरससबहिंचहेकीन्हा॥

नारद वचन न मैं परहरहूं । बसाभवन उजरो नहिंडरहूं ॥
अब मैं जन्म शम्भु हित हारा । कोगुण दोषहिंकरे विचारा ॥
जन्म कोटि लग रगर हमारी । वरउं शम्भु नतुरहौं कुमारी ॥
तजौं न नारद कर उपदेशू । आप कहें शतवार महेशू ॥

कामो वाच ।

तदपि करहुं मैं काज तुम्हारा । श्रुतिकहेपरमधरम उपकारा ॥
परहित लाग तजै जो देही । सन्तत सन्त प्रशंसहिं तेही ॥
शिव दधीच हरिचन्द नरेशा । सहे धर्महित कोटि कलेशा ॥
रन्ति देव बलि भूप सुजाना । धर्म धरेहु सहे सङ्कट नाना ॥
धर्म न दूसर सत्य समाना । आगमनिगमपुराणबखाना ॥

दोहे योग व ज्ञान ।

इन्द्रिन को मन वश करे, मनकूं वश करे पौन ।
अनहद वश करे वायु को, अनहद कूं ले तौन ॥ १ ॥
एक भंवर गुञ्जारसी, दूज घूंघर होय ।
तीजी शब्द है शङ्ख जू, चौथा घण्टा सोय ॥ २ ॥
पचवें ताल जो बाज ही, छटें, सु मुरली नाद ।
सप्तम भेरी गाज ही, अष्ट मृदङ्गहि नाद ॥ ३ ॥

नव दश गजन सिंह नफीरी, चरण दास सुन जोय।
पावहि दर्शन ब्रह्म के, मनसा पूरण होय ॥ ४ ॥
सेवक स्वामी होत है, सुने जो अनहद नाद।
जीव ब्रह्म हो जात है. पावे अपनी आद ॥ ५ ॥
इन्द्री पलटै मन विषै, मन पलटै बुधि माहिं।
बुधि पलटै हरि ध्यान में, फेर होय लय जाहिं ॥ ६ ॥
देखे भृकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय।
ध्यान किये पहले जहां, अग्नि फूल दृष्टाय ॥ ७ ॥
केते दिवसन मांहहि, दीप ज्योति प्रगटाय।
फिर तारों की मालसी, दामिनि बहु दमकाय ॥ ८ ॥
बहुत चन्द सूरज घने, देखे कोटि अनन्त।
झिलमिल२ तेजमय, ध्यान माहिं दर्शन्त ॥ ९ ॥
जल अथाह में डूब ज्यों, देखे दृष्टि उघार।
जो दीखे सो नोर ही, दश दिशि अपरम्पार ॥ १० ॥
ज्योतिमयी मण्डल लखे, हृदय कमल में होय।
तामें देखे और इक, दीवे की सी लोय ॥ ११ ॥
ध्यानी ध्यानी लगाय के, रहै राम लौ लाय।
आपा बिसरे हर मिले, बहुर न उपजे आय ॥ १२ ॥

परमानन्द सरूप तू, नहिं तो में दुख लेश।
अज अविनाशी ब्रह्म चित, क्यों मानों हिय क्लेश ॥ १३ ॥
आप भुलानो आप में, बँध्यो आप ही आप।
जाको तू ढूंढ़त फिरे, सो तू आपहि आप ॥ १४ ॥
नहिं कारण कार्य कछु, नहीं काल नहिं देश।
शिवस्वरूप पूरण अचल, सजाति विजाति नहिं लेश ॥१५॥
चली पूतरी लवण की, थाह सिन्धु की लैन।
अनाथ आप आपे भई, पलट कहे को बैन ॥ १६ ॥
राग द्वेष मन के धरम, तू तो मन नहिं होय।
निर्विकल्प व्यापक अमल, सुखस्वरूप तू सोय ॥ १७ ॥
जैसे सांचे में पर्यो, होत कनक बहु अङ्ग।
नानावत यों ब्रह्म में, लय उपाधि को सङ्ग ॥ १८ ॥
ज्यों तिल माहीं तैल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुज्झ में, जाग सके तो जाग ॥ १९ ॥
पहुप मध्य ज्यों बास है, व्याप रहा सब माहिं।
सन्तो माहीं पाइये; और कहूं कछु नाहिं ॥ २० ॥
गागर ऊपर गागरी, चोले ऊपर द्वार।
शूली ऊपर सांथरा, तहां बुलावे यार ॥ २१ ॥

भेद ज्ञान तौलों भलो, जौलों मुक्ति न होय।
परम जात परघर भई, तब विकल्प नहिं होय ॥ २२ ॥
तू है सो परमात्मा, मैं हूं ब्रह्म स्वरूप।
यही आत्मा ब्रह्म है, जीव है ब्रह्म स्वरूप ॥ २३ ॥
उलट समानो आप में, प्रगटी ज्योति अनन्त।
साहब सेवक एक सँग, खेलें सदा बसन्त ॥ २४ ॥
अलख लखा लालच लगा, कहत न आवे बैन।
निज मन धसा सरुप में, सत्गुरु दीन्ही सैन ॥ २५ ॥
पिञ्जर प्रेम प्रकाशिया, जागी ज्योति अनन्त।
संशय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कन्त ॥ २६ ॥
गुरू मिले शीतल भया, मिटी मोह तन ताप।
निस बासर सुख निधि लहूं, अन्तर प्रगटे आप ॥ २७ ॥
सत् चित् आनन्द एक तू, ब्रह्म अजन्य असङ्ग।
विभु चेतन माया करै, जगको उत्पत्ति भङ्ग ॥ २८ ॥
सब ही के भीतर बसे, सब का जाननहार।
वाही ते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥ २९ ॥
देह मरे तू है अमर, पारब्रह्म है सोय।
अज्ञानी भटकत फिरे, लखे सो ज्ञानी होय ॥ ३० ॥

देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान।
नित न्यारो तू देह से, देह कर्म सब जान ॥ ३१ ॥
डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करन अहार।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गर्मी शीत निहार ॥ ३२ ॥
जाति वर्ण कुल देह की, सूरति मूरति नाम।
उपजै विनशै देह सो, पांच तत्त्व को ग्राम ॥ ३३ ॥
पावक पानी वायु है, धरती अरु आकाश।
पांच तत्त्व के कोट में, आय कियो तैं बास ॥ ३४ ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देह जान आकार।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान तत सार ॥ ३५ ॥
लखै कटै काया यही, बिनै मिटै फिर होय।
जीव अविनाशी नित्य है, जाने बिरला कोय ॥ ३६ ॥
निराकार अद्वैत अचल, निर्वासी तू जीव।
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनाशी सीव ॥ ३७ ॥
चेतन ज्यों की त्यों सदा, सदा अकर्ता जोय।
सब कर्मन सों रहित है, आतम ऐसो होय ॥ ३८ ॥
काहू ते उपज्यो नहीं, बाते भयो न कोय।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावे सोय ॥ ३९ ॥

दृष्टि मुष्ट आवै नहीं, रूप न देखो जाय।
बिन सूरत बिन नाम को, घट २ रहो समाय ॥ ४० ॥
जैसे तिल में तैल है, फूल मध्य ज्यों वास।
दूध मध्य ज्यों घीव है, लकड़ी मध्य हुतास ॥ ४१ ॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मध्य हीन।
आदि अन्त अकार को, सो तू झूठो चीन ॥ ४२ ॥
इन्द्रिय जान सके नहीं, मन बुधि लहे न ताय।
ज्ञान दृष्टि पहिचानिये, वासों वाको पाय ॥ ४३ ॥
सब में देखे आपकूं, सबकूं अपने माहिं।
पावै जीवन मुक्त को, या में संशय नाहिं ॥ ४४ ॥
जल थल पावक राम है, राम रमो सब माहिं।
हरि सब में सब राम में, और दूसरो नाहि ॥ ४५ ॥
ऊँच नीच निर्गुण गुणो, रङ्क नाथ अरु भूप।
हूं घट बढ़ कासों कहूं, सब आनन्द स्वरूप ॥ ४६ ॥
शस्त्र छेद सके नहीं, पावक सके न जारि।
मरै मिट सो तू नहीं, गुरु गम भेद निहारि ॥ ४७ ॥
नहिं कारण कार्य कछू, नहीं काल नहिं देश।
शिव स्वरूप पूरण अचल, सजाति बिजाति न लेश ॥ ४८ ॥

अज्ञ तज्ञ नहिं शुभाशुभ, नहिं ईश्वर नहिं जीव।
सत्य झूंठ मो में नहीं, अमल समल त्रिय पीव ॥ ४६ ॥
जैसे दिनकर के उदय, दीपक द्युति दुरि जात।
तैसे ब्रह्मानन्द में, आनन्द सबै बिलात ॥ ५० ॥
क्षुधा पिपासा हर्ष पुनि, शोक जन्म अरु अन्त।
ये षट उरमी धरम धन, आतम रहित अनन्त ॥ ५१ ॥
बसन भयो ता सूत में, सूतन खिसन मँझार।
आपस में फूतरी सबै, करत परस्पर रार ॥ ५२ ॥
ज्ञानी करे अनेक कर्म, विधिवत जग व्यवहार।
लिपे न धूम आकाश ज्यों, जान्यो जगत असार ॥ ५३ ॥
जाग्रत स्वप्न तहां नहीं, जहँ सुषुप्ति मन लीन।
मैं तू तहां न सम्भवे, आतम निश्चय कीन ॥ ५४ ॥
जाग्रत माहिं सुषुप्ति, मतवारे की केल।
करे चेष्टा बाल ज्यों, आत्म सुख रहो झेल ॥ ५५ ॥
जैसे भूजे अन्न में, उद्भवता भई छीन।
तैसे आत्मवान को, भई जगत मति लीन ॥ ५६ ॥
जो ताकी पूजा करत, सञ्चित सुकृत सुलेत।
दोष दृष्टि तिहिं जो लखे, ताहि पाप फल देत ॥ ५७ ॥

हेतु मोक्ष को ज्ञान इक, नहीं कर्म नहिं ध्यान।
रज्जू सर्प तब ही नशै, होय रज्जू को ज्ञान ॥ ५८ ॥
जगत खेदि में परो जिन, केवल दुख ता माहिं।
सत्य २ पुनि सत्य कहुं, सुख स्वपनेहू नाहिं ॥ ५९ ॥
सहजो भज हरि नाम को, तजो जगत सूं नेह।
अपना कोई है नहीं, अपनी सगी न देह ॥ ६० ॥
यही कहें गुरु देव जी, यही पुकारें सन्त।
सहजो तज या जगत को, तोहि तजेंगे अन्त ॥ ६१ ॥
झूठा नाता जगत का, झूठा है घर वास।
यह तन झूठा देखकर, सहजो भई उदास ॥ ६२ ॥
जब लग चावल धान में, तब लग उपजे आय।
जग छिलके को तज निकस, मुक्तरूप होजाय ॥ ६३ ॥
कुटम्ब सँघाती बीच में, आदि अन्त नहिं होय।
बीच मिले बीचहिं गये, सहजो संग न कोय ॥ ६४ ॥
सहजो स्वारथ सब लगे, दारा सुत अरु बीर।
जीवत जोतै बैल ज्यों, मुये बटावें सीर ॥ ६५ ॥
मर बिछुरे जो कुटुम्ब से, बहुर न देखे आय।
महल द्रव्य सन्तान को, सहजो पचे बलाय ॥ ६६ ॥

सहजो जीवत सब सगे, मुये निकट नहिं जायँ।
रोवें स्वारथ आपने, सपने देख डरायँ ॥ ६७ ॥
दरद बटाय सके नहीं, मुये न चाले साथ।
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद ॥ ६८ ॥
सहजो गुरु परताप से, ऐसी जान पड़ी।
नहीं भरोसा स्वांस का, आगे मौत खड़ी ॥ ६९ ॥
स्वांस ख़ज़ानो जात है, ताकी सूधी नाहिं।
सहजो खरचो कहा रहे, कर हिसाब घर माहिं ॥ ७० ॥
झुरझुर के पिंजरा भये, रोय गमाये नैन।
मरगये सो नाहीं मिले, सहजो सुने न बैन ॥ ७१ ॥
जो रोवे सो बाहुरे, तो रोवो दिन रात।
तन छीजे वह ना मिले, सहजो कूड़ी बात ॥ ७२ ॥
तेरा था तो क्यों मुवा, पकड़ न राखी बाहिं।
सहजो बहुतक मिल छुटे, चौरासी के माहिं ॥ ७३ ॥
कबहुंक तेरा बाप है, कबहुंक तेरा पूत।
कबहुंक तेरा मित्र है, कबहुंक तेरा दूत ॥ ७४ ॥
कलप रोय पछताय थक, नेह तजो कै कूर।
पहिले ही से जो तजै, सहजो समरथ शूर ॥ ७५ ॥

यों खाता यों डोलता, मीठे कहता बोल ।
यह विचार तू मत करे, चित रहै डावांडोल ॥ ७६ ॥

बैठ पहर यूं चालता, वसतर भूषण लाल ।
यह विचार तू मत करै, छल रूपी जग जाल ॥ ७७ ॥

सहजो लोक परलोक की, नहीं वासना ताहि ।
सो वह ब्रह्म स्वरूप है, सागर लहर समाहि ॥ ७८ ॥

जाकी गुरु में वासना, सो पावे भगवान ।
सहजो चौथे पद बसे, गावत वेद पुरान ॥ ७९ ॥

परमेश्वर की वासना, अन्त समय मन माहिं ।
तन छूटे हरि क्यों मिले, उपजै विनशै नाहिं ॥ ८० ॥

चौरासी योनी भुगत, पायो मनुष्य शरीर ।
सहजो चूके भक्ति बिन, फिर चौरासी पीर ॥ ८१ ॥

द्रव्य हेतु हरि को भजे, धन ही की परतीत ।
स्वारथ लै सब को मिले, अन्तर की नहिं प्रीत ॥ ८२ ॥

दोहे सत्संग ।

जगत मोह फांसी अजर, कटे न आन उपाय ।
जो नित सतसङ्गत करे, सहज मुक्त होजाय ॥ १ ॥

कामधेनु अरु कल्पतरु, जो सेवत फल होय।
सतसङ्गति छिन एक में, प्राणी पावै सोय ॥ २ ॥
सतसङ्गति निज कल्पतरु, सकल कामना देत।
अमृतरूपी वचन कहि, तिहूं ताप हरि लेत ॥ ३ ॥
पृथ्वी पावन होत है, सब ही तीरथ आदि।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरे जब साधि ॥ ४ ॥
काम क्रोध मद लोभ हनि, गर्ब तजै जो साध।
राम नाम हिरदे धरो, रोम रोम आराध ॥ ५ ॥
साधु सोय तहां सोय रहु, भोजन संग ही जेउं।
जो वह गावे प्रेम से, मैं हूं ताली देउं ॥ ६ ॥
चक्रवर्ती को सुख नहीं, नहीं सुखी देवेश।
वीतराग मुनि हैं सुखी, वसैं एकान्त हमेश ॥ ७ ॥
सोई सुखी संसार में, जो सुमिरे भगवान।
राग द्वेष जाके नहीं, सोई चतुर सुजान ॥ ८ ॥
भोजन छादन की नहीं, सोच करे हरिदास।
विश्वभरण प्रभु करत है, सो किमि करैं निरास ॥ ९ ॥
विनु सतसङ्ग न हरि कथा, तेहि विनु मोह न भाग।
मोह गये विनु राम पद, होइ न दृढ़ अनुराग ॥ १० ॥

मुक्ति द्वार पालक चतुर, सम सन्तोष विचार।
चौथी सतसङ्गत धरम, महापूज्य निरधार ॥ ११ ॥
जो वे दया करें तेरे पर, प्रेम पिलावें भङ्ग।
जाके अमल दरश है, हरि को नैना आवे रङ्ग ॥ १२ ॥
सुत दारा अरु लक्ष्मी, पापी के भी होय।
सन्त समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ दोय ॥ १३ ॥
जब लग आश शरीर की, निर्भय भया न जाय।
काया माया मन तजै, चौरें रहे बजाय ॥ १४ ॥
कथा कीर्तन कलि विषे, भवसागर की नाव।
कहे कबीर जग तरन को, नाहीं और उपाय ॥ १५ ॥
कथा कीर्तन सुनन को, जो कोई करे सनेह।
कहे कबीर ता दास की, मुक्ति में नहिं सन्देह ॥ १६ ॥
श्रुति जो हर मिलन को, तो करिये सतसङ्ग।
बिना परिश्रम पाइये, पूरण परमानन्द ॥ १७ ॥
सन्त सङ्ग अपवर्ग कर, कामी भव कर पन्थ।
कहहिं सन्त कवि कोविद, श्रुति पुराण सद ग्रन्थ ॥ १८ ॥
जब २ दर्शन राम दे, तब मागौं सत्सङ्ग।
चाहौं पदवी भक्ति की, चढ़े सो नवधा रङ्ग ॥ १९ ॥

नर संसारी लग्न में, दुख सुख सहे करोर।
नारायण हरि प्रीति में, जो आवे सो थोर ॥ २० ॥
नारायण कीजे सदा, दुष्ट सङ्ग का त्याग।
जिमि लुहार के ढिङ्ग परे, बदन चिङ्गारी आग ॥ २१ ॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य है, उदय अस्त लों राज।
तुलसी जो निज मरन है, तो आवे केहि काज ॥ २२ ॥
सिंहों के लँहड़े नहीं, हंसों के नहीं पांत।
लालों की नहिं बोरियां, साधु न चले जमात ॥ २३ ॥
जात पांत नहिं पूछिये साधु को, पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥ २४ ॥
रवि को तेज घटे नहीं, जो घन जुड़े घमण्ड।
साधु वचन पलटे नहीं, पलट जाय ब्रह्मण्ड ॥ २५ ॥
जननी जने तो भक्त जन, कै दाता कै शूर।
नाहीं तो तू बांझ रह, काहे गँमावे नूर ॥ २६ ॥
ग्रह गांठ नहिं बांधते, जब देखे तब खाहिं।
गोविन्द तिन के पाछे फिरै मत भूखे रह जाहिं ॥ २७ ॥
जा घर साधु न सेवई, हरि की सेवा नाहिं।
ते घर मरघट सार के, भूत बसे ता माहिं ॥ २८ ॥

सुन्दर मानुष देह की, महिमा बरणै साध ।
जामें बसके पाइये, पूरण ब्रह्म अगाध ॥ २६ ॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह की धार ।
तिनमें अति दारुण दुखद, माया रूपी नार ॥ ३० ॥
एक अज्ञानी के हिये, बर्तें मते अनेक ।
अनाथ सुज्ञानी कोटि को, निश्चय निज मत एक ॥ ३१ ॥
अज्ञानी आसक्त मति, करे सुबन्धन हेत ।
ज्ञानी के आसक्ति नहिं, तजे न कछु गह लेत ॥ ३२ ॥
भ्रमण करत जो पवन ते, सूखो पीपर पात ।
शेष करम प्रारब्ध ते, क्रिया करत दरशात ॥ ३३ ॥
एक घड़ी आधी घड़ी, आधी ह में आध ।
तुलसी सङ्गत साधुकी, हरे कोटि अपराध ॥ ३४ ॥
साधू की निन्दा बुरी, मत कोई कीजो भूल ।
दुनिया में दुःख पाइये, रहे नरक में झूल ॥ ३५ ॥
रक्त छांड़ि पय को गहे, ज्यों रे गउ का बच्छ ।
औगुन छांड़े गुन गहे, ऐसा साधू लच्छ ॥ ३६ ॥
छाजन भोजन प्रीति सों, दीजे साधु बुलाय ।
जीवत यश है जगत में, अन्त परमपद पाय ॥ ३७ ॥

दोय बखत ना कर सके, तो दिनमें कर इकबार।
कबीर साधू दरश ते, उतरे भवजल पार ॥ ३८ ॥
कबीर मेरे साधु की, निन्दा करो मत कोय।
जो पै चन्द कलङ्क है, तउ उजियारा होय ॥ ३९ ॥
जो मोय अरपे प्रीति से, सन्तन मुख होय खाउं।
सन्तन के मैं सङ्ग हूं, अन्त कहूं नहिं जाउं ॥ ४० ॥

साधू महिमा को कहे, शोभा अधिक अपार।
रसना दोय हज़ार सों, शेषहुं जावैं हार ॥ ४१ ॥
भवसागर सो तारि कर, लेजावे बहु जीव।
साधू केवट राम के, पार मिलावे पीव ॥ ४२ ॥
सन्त मिलन को जाइये, तजि माया अभिमान।
ज्यों २ पग आगे धरे, त्यों २ यज्ञ समान ॥ ४३ ॥
विधिवत यज्ञ करत सदा, जे द्विज उत्तम गोत।
साधु निकट चलि जात हीं, सो फल पग २ होत ॥ ४४ ॥
दर्शन कीजे साधु का, कै गुरु का कर लेय।
जहँ तहँ ब्रह्महिं देखिये, दुविधा दुर्मति हेय ॥ ४५ ॥
ना सुख दारा सुत महल, ना सुख भूप भये।
साधु सुखी सहजो कहे, तृष्णा रोग गये ॥ ४६ ॥

ना सुख विद्याके पढ़े, ना सुख वाद विवाद।
साधु सुखी सहजो कहे, लागे सुन्न समाद ॥ ४७ ॥

खाली साधु न भेटिये, सुन लीजे सब कोय।
कहे कबीरा भेट धर, जो तेरे घर होय ॥ ४८ ॥

साधु मिले साहब मिले, अन्तर रही न रेख।
मनसा वाचा कर्मना, साधू साहब एक ॥ ४९ ॥

दोहे आचार सम्बन्धी।

प्रभु चाहे सोई करे, ताकूं टोके कौन।
देख २ अचरज रहा, चरणदास गह मौन ॥ १ ॥

सब रँग तेरे तैंरँगे, तू ही सब रँग माहिं।
सब रँग तेरे तैं किये, दूजा कोई नाहिं ॥ २ ॥

वैसा तो रँगरेज़ना, वैसा छीपी नाहिं।
वैसा कारीगर नहीं, या दुनियां के माहिं ॥ ३ ॥

जो दिन में देखे नहीं, अपने दृगन उलूक।
जगत प्रकाशक भानु की, कहा कहावत चूक ॥ ४ ॥

अनहोनी प्रभु कर सके, होनहार मिट जाय।
तुलसी रघुपति राम ते, काहू की न बसाय ॥ ५ ॥

तुलसी या संसार में, सब से मिलिये धाय।
ना जानूं काहू भेष में, नारायण मिल जाय ॥ ६ ॥
सब तज कर मोको भजे, मोही सेती प्रीति।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जू मेरी रीति ॥ ७ ॥
मन सों रहु निर्वैरता, मुख सों मीठा बोल।
तन सूं रक्षा जीव की, चरणदास कह खोल ॥ ८ ॥
धोखे ही में हथनी लखी, आयो गज ललचाय।
खन्दक़ माहीं रुक गयो, शीश धुने पछताय ॥ ९ ॥
खांडा पकरे शील का, काम हने तत्काल।
शील बिना नरके परे, शील बिना बेहाल ॥ १० ॥
आज्ञाकारी पीय की, रहै पिया के सङ्ग।
तन मन सूं सेवा करे, और न दूजा रङ्ग ॥ ११ ॥
काटे पर कदली फले, कोट यत्न कर सींच।
विनय न मान खगेश सुत, डाटे पै नव नीच ॥ १२ ॥
जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन कर्तार।
सन्त हंस गुण गहत हैं, पर हरि वारि विकार ॥ १३ ॥
सब जीवन सुख दीजिये, सब से मीठा बोल।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥ १३ ॥

आशा की डोरी बन्धी, क्षण घर में क्षण द्वार।
थिरता नहीं सन्तोष, बिनु, दुखी पिङ्गला नार॥ १४॥
उड़ती देखी चील को, पंजे माहीं मांस।
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवें स्वांस॥ १५॥
अजगर करे न चाकरी, पक्षी करे न काम।
दास मलूका यों कहैं, सब का दाता राम॥ १६॥
परनारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय।
घर बाहर की आग ज्यों, देवे हाथ जलाय॥ १७॥
शरणागत कहँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।
ते नर पामर पापमय, तिनहिं विलोकत हानि॥ १८॥
सूरा सोई पिछानिये, लड़े धर्म के हेत।
पुरजा २ कट पड़े, तउ न छोड़े खेत॥ १९॥
सन्मुख आये शत्रु को, जीत लेत धन धाम।
इतने ही में स्वर्ग सुख, होत स्वामी को काम॥ २०॥
हुई गरज मन और था, मिटी गरज मन और।
उदयराज मन की प्रकृत, रहै न एकहि ठौर॥ २१॥
तुलसी कहत पुकार के, सुनो सकल दे कान।
हेम दान गज दान ते, बड़ो दान सन्मान॥ २२॥

धन देके तन राखिये, तन दे रखिये लाज।
तन धन दोनों दीजिये, एक प्रीति के काज ॥ २३ ॥
एक बड़ो दूजे अगनि, भरम पोल ता माहिं।
चौथे गांठ कुबुद्धि की, याते भेदत नाहिं ॥ २४ ॥
यथा लाभ सन्तोष सुख, रघुपति चरन सनेह।
तुलसी जो मन वश रहै, जस कानन तस गेह ॥ २५ ॥
तन कर मन कर वचन कर, देत न काहू दुःख।
तुलसी पातक झरत है, देखत उनको मुख ॥ २६ ॥
जो कुछ आवे सहज में, सोई मीठा जान।
कड़ुआ लागे नीम सा, जामे ऐंचातान ॥ २७ ॥
राज दुवारे साधु जन, तीन वस्तु को जाय।
कै मीठा कै मान को, कै माया की चाय ॥ २८ ॥
संस्कृत है कूप जल, भाषा बहता नीर।
भाषा सद्गुरु सहत है, सद्गुरु गहर गँभीर ॥ २९ ॥
भूप दुःखी अवधू दुखी, दुखी रङ्क विपरीत।
कहे कबीर वह सब दुखी, सुखी सन्त मन जीत ॥ ३० ॥
परारब्ध पहिले बनी, पाछे बना शरीर।
तुलसी यह आश्चर्य है, मन नहिं बांधे धीर ॥ ३१ ॥

पण्डित कोरी पोथियां, ज्यों तीतर को ज्ञान।
औरन सगुण बतावहिं, आपा फन्द न जान ॥ ३२ ॥
सतगुरु सँग सांची कथा, कोई न सुनई कान।
कलियुग पूजा दम्भ की, बाजारी को मान ॥ ३३ ॥
ऊंचे पानी ना टिके, नीचे ही ठहराय।
नीचा होय सो भर पिये, ऊंच पियासा जाय ॥ ३४ ॥
भेद भावना मिट गई, क्लेश भये सब दूर।
जित देखों उत दीख है, महादेव भरपूर ॥ ३५ ॥
रे मूरख जिनके लिये, खपता है दिन रात।
अन्तकाल ना सुनेगें, वे तेरी एक बात ॥ ३६ ॥
राग मूल संसार है, राग मिटें मिट जाय।
नाश हुए जिमि तैल के, दीपक ज्योति बिलाय ॥ ३७ ॥
दान दीन को दीजिये, मिटे दरद की पीर।
औषधि ताको दीजिये, जाके रोग शरीर ॥ ३८ ॥
दादू आदर भाव का, मीठा लागे मोठ।
बिन आदर व्यञ्जन घुरा, जीमन वाला ठोठ ॥ ३९ ॥
भ्रम जाता घर पलटतां, त्रिया पडन्ता ताव।
ये तीनों दिन मरण के, कहा रङ्क कहा राव ॥ ४० ॥

पाप निवारत हित करत, गुन गिन औगुन ढांक।
दुख में राखत देत कछु, सत मित्रन ये आंक ॥ ४१ ॥
इक तरु सूखे की अगनि, जारत सब वनराय।
त्यों ही पूत कुपूत में, वंश समूल नशाय ॥ ४२ ॥
परसुख सेवक परिखिये, बान्धव दुख की वार।
मित्र सु आपतकाल में, विभव हानि में नार ॥ ४३ ॥
बात कहन की रीति में, है अन्तर अधिकाय।
एक वचन ते रिस बढ़े, एक वचन ते जाय ॥ ४४ ॥
मधुर वचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनक शीत जल ते मिटै, जैसे दूध उफान ॥ ४५ ॥
आपन गाली एक है, उलटत होय अनेक।
कहे कबीर ना उलटिये, वही एक की एक ॥ ४६ ॥
ऐसी बानी बोलिये, मनका आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय ॥ ४७ ॥
बोली तो अनमोल है, जो कोई जाने बोल।
हिया तराजू तौल कर, तब मुख बाहर खोल ॥ ४८ ॥
शब्द बाराबर धन नहीं, जो कोई जाने बोल।
हीरा तो दामों मिले, शब्द का मोल न तोल ॥ ४९ ॥

बहुतन को न विरोधिये, निबल जान बलवान।
मिल मख जायँ पिपीलिका, नागहिं नगके मान ॥ ५० ॥
बहुत निबल मिल बल करैं, करे जु चाहैं सोय।
तिनकन की रसरी करी, करी निबन्धन होय ॥ ५१ ॥
जूआ खेलत होत है, सुख सम्पति को नास।
राज काज नल ते छुट्यो, बसे परडु बनवास ॥ ५२ ॥
समय न चूके चतुर नर, कहत कवीजन कूक।
चतुरन के खट के हिये, समय चूक की हूक ॥ ५३ ॥
देह बिषें बल गेह धन, जस इत पुन परलोक।
चार बचाइ इन्द्रीन के, कीजे भोग अशोक ॥ ५४ ॥
जा दिन विद्या धरम को, जसको लाभ न होय।
विदुर कहैं धृतराष्ट्र ते, बन्ध्य काल है सोय ॥ ५५ ॥
आलस वैरी तन बसत, सब सुख को हर लेत।
त्यों उद्यम सों बन्धुता, किये सकल सुख देत ॥ ५६ ॥
तीनहुं राखै दृष्टि में, तीन न बिगरन देत।
तीन पिछानै विमल मति, सब को वश कर लेत ॥ ५७ ॥
कृपण जतन धनको करे, कायर जीव जतन।
सूर जतन उनको करे, जिनका खाया अन्न ॥ ५८ ॥

ना कुछ करो न कर सको, ना कछु करने योग।
तुलसी आय संसार में, भले हँसाये लोग ॥ ५९ ॥
दादू पछतावा रहा, सके न ठाहर लाय।
अरथ न आया राम के, यह तन यों ही जाय ॥ ६० ॥
जाको रक्खे साइयां, मार न सक्के कोय।
बाल न बांका कर सके, जो जग बैरी होय ॥ ६१ ॥
जेती लहर समुद्र की, तेती मन की दौड़।
सहजो हीरा नीपजे, जो मन आवे ठौर ॥ ६२ ॥
दौड़त दौड़त दौड़ियां, जहँ लग मन की दौड़।
दौड़ थकी मन थिर भया, वस्तु ठौर की ठौर ॥ ६३ ॥
पढ़ना गुनना चातुरी, यह तो बात सहल।
कामदहन मन वश करन, गगन चढ़न मुशकल ॥ ६४ ॥
नाम भजो मन वश करो, यही बात है तन्त।
काहे को पढ़ पच मरो, कोटि ज्ञान के ग्रन्थ ॥ ६५ ॥
अपने उरझे उरझियां, दीखे सब संसार।
अपने सुरझे सुरझियां, यह गुरु ज्ञान विचार ॥ ६६ ॥
मन दाता मन लालची, मन राजा मन रङ्क।
जो यह मन गुरु से मिले, तो गुरु मिले निशङ्क ॥ ६७ ॥

मन के बहुते रङ्ग हैं, छिन छिन बदलें सोय।
एक रङ्ग में जो रहे, ऐसा बिरला कोय ॥ ६८ ॥
कोटि करम पल में करे, यह मन विषया स्वाद।
सत्गुरु शब्द न मानही, जन्म गँवाये बाद ॥ ६९ ॥
तन को योगी सब करे, मन को करे न कोय।
सहजै सब सिध पाइये, जो मन योगी होय ॥ ७० ॥
मन ही अपना शत्रु है, मन ही अपना मित्त।
संसारी मन शत्रु है, परमारथ रत मित्त ॥ ७१ ॥
दुनियां सप्न समान यह, क्या भरमा मन देख।
आंख खुले कछु है नहीं, उपजे ज्योंहि विवेक ॥ ७२ ॥
घायल ऊपर घाव ले, टोटे त्यागी होय।
भरि योवनमें शीलवन्त, कोई बिरला होय तो होय ॥ ७३ ॥
ज्ञानी ध्यानी संयमी, दाता सूर अनेक।
जपिया तपिया बहुत हैं, शीलवन्त कोई एक ॥ ७४ ॥
मांगन मरन समान है, मत मांगो कोई भीख।
मांगन ते मरना भला, यह सत्गुरु की सीख ॥ ७५ ॥
कोटि करम लागे रहैं, एक क्रोध की लार।
किया कराया सब गया, जब आया अहँकार ॥ ७६ ॥

साध सन्तोषी सर्वदा, निर्मल जिनके बैन ।
तिनके दर्शन परस तें, जिय उपजै सुख चैन ॥ ७७ ॥
माया छाया एकसी, बिरला जाने कोय ।
भगता के पाछे लगी, सन्मुख भागे सोय ॥ ७८ ॥
आंधी आई प्रेम की, ढई भरम की भीत ।
माया टाटी उड़ गई, लगी नाम सों प्रीति ॥ ७९ ॥
मूरख के समझावते, ज्ञान गांठ का जाय ।
कोयला होय न ऊजरो, सो मन साबुन लाय ॥ ८० ॥
परनारी कै राचनै, सीधा नर कै जाय ।
तिसको यम छांड़ै नहीं, कोटिन करे उपाय ॥ ८१ ॥
परनारी पैनी छुरी, मति कोई करो प्रसङ्ग ।
दस मस्तक रावन गये, परनारी के सङ्ग ॥ ८२ ॥
यार बुलावे भाव से, मो पै गया न जाय ।
धन मैलो पिय ऊजरा, लाग न सकूं पांय ॥ ८३ ॥
जूआ चोरी मुखबरी, ब्याज घूंस परनार ।
जो चाहे दीदार को, एती वस्तु निवार ॥ ८४ ॥
पण्डित और मसालची, दोनों सूझे नाहिं ।
औरन को करें चांदना, आप अँधेरे माहिं ॥ ८५ ॥

समदृष्टि सत्गुरु किया, मेटा भरम विकार।
जहँ देखूं तहँ एक ही, साहब का दीदार ॥ ८६ ॥
ज्ञानी मूल गँवाइयां, आप भये करता।
ताते संसारी भला, जो सदा रहे डरता ॥ ८७ ॥
कोई तो तन मन दुखी, कोई चित्त उदास।
एक एक दुख सबन को, सुखी सन्त का दास ॥ ८८ ॥
तुलसी सम्पति के सखा, पड़त विपति में चीन्ह।
सज्जन कञ्चन कसन को, विपति कसौटी कीन्ह ॥ ८९ ॥
नीच २ सब तर गये, सन्त चरन लौ लीन।
जातहि के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ ९० ॥
ज्यों कदली के पात में, पात २ में पात।
त्यों चतुरन की बात में, बात २ में बात ॥ ९१ ॥
सरस कविन के हृदय कों, बेधत है सो कौन।
असमझवार को सराहिबो, समझवारकी मौन ॥ ९२ ॥
ऊजड़ खेड़ा फिर बसे, निरधनियां धन होय।
बीता दिन नहीं बाहुड़े, मुवा न जीवे कोय ॥ ९३ ॥
नाच कूद मद पीवते, घर २ होते राग।
से मन्दिर ख़ाली पड़े, बैठन लागे काग ॥ ९४ ॥

हँसा सरवर ना तजो, जो जल खारो होय।
डावर २ डोलता, भलो न कहसी कोय ॥ ९५ ॥
कहां हेमन्त शीतल भयो, हरे रूख जल जायँ।
ताते तो ग्रीष्म भलो, जरे हरे होजायँ ॥ ९६ ॥
गज मुख ते तन्दुल गिस्यो, घट्यो न तासु अहार।
सो ले चली पिपीलिका, पालन को परिवार ॥ ९७ ॥
हति पुर घट सम अज्ञ जन, मेघ समान सुजान।
पढ़ै वेद इहि हेतु तैं, ज्ञानी पै तजि आन ॥ ९८ ॥
जग रचना सब झूठि रच, कौन मिले भलसार।
भक्ति करो तो भव तरो, यही वेद का सार ॥ ९९ ॥
वह दिन है अकार्थी, सङ्गत भई न सन्त।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवन्त ॥ १०० ॥
चतुराई चूल्हे परी, भट्टी परे अचार।
तुलसी हरि भक्ति बिन, चारों वर्ण चमार ॥ १०१ ॥
परमानन्द कृपायतन, मन परि पूरित काम।
प्रेम भक्ति अनपायिनी, देहु हमहिं श्रीराम ॥ १०२ ॥
यदपि प्रथम दुख पावही, शेवै बाल अधीर।
व्याधि नाश हित जननी, गिनै न सो शिशु पीर ॥ १०३ ॥

रचनहार को चीन्हले, खाने को क्या रोय।
दिल मन्दिर में बैठ कर, तान बिछोना सोय ॥ १०४ ॥
कबीर रोड़ा होरह बाट का, तज मन का अभिमान।
ऐसा जो कोई दास हो, ताहि मिले भगवान ॥ १०५ ॥
रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पक्षियों को दुख देय।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों धरनी की खेय ॥ १०६ ॥
खेह हुई तो क्या हुई, उड़ २ लागे अङ्ग।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों पानी सर्वङ्ग ॥ १०७ ॥
पानी हुआ तो क्या हुआ, तत्ता शीला होय।
हरि जन ऐसा चाहिये, जैसे हरि ही होय ॥ १०८ ॥
भक्त हमारो पग धरे, जहां धरूं मैं हाथ।
लारे लागो ही फिरूं, कबहुं न छोड़ूं साथ ॥ १०९ ॥
मोको वश कियो जो चहे, भक्तन की कर सेव।
उनमें होकर मैं मिलूं, करूं बहुत ही हेव ॥ ११० ॥
मम भक्त जित २ फिरे, गवनै लागा जांघ।
जहां तहां रक्षा करौं, भक्तवत्सल मेरो नाम ॥ १११ ॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तन के माहिं।
मेरे अरु मम सन्त के, कछु भी अन्तर माहिं ॥ ११२ ॥

पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोय ।
सर्व भाव भज कपट तज, मोहि परमप्रिय सोय ॥ ११३ ॥
व्यापक अकल अनीह अज, निर्गुण नाम न रूप ।
भक्ति हेतु नाना विधहिं, करत चरित्र अनूप ॥ ११४ ॥
विद्या धन कुल रूप मद, प्रभुता यौवन नारि ।
ये बाधक हरि भक्त के, कहें बुधि वेद विचारि ॥ ११५ ॥
भक्ति भाव को छोड़कर, करी दम्भ की हाट ।
मुक्ति पन्थ को तज दिया, लई नरक की बाट ॥ ११६ ॥
भक्त सङ्ग छाड़ो नहीं, सदा रहत नित पास ।
जहां न आदर भक्त को, तहां न मेरी वास ॥ ११७ ॥
निराकार निर्गुण प्रभु, तदपि सगुण धरे देह ।
करत रहत नाना चरित, केवल भक्त सनेह ॥ ११८ ॥
निज मुखते भाष्यो यही, भक्ति अति ही प्रिय मोय ।
भक्त वचन उलँघो नहीं, अविहित विहित जो होय ॥ ११९ ॥
रावणार यश पावन, गावहिं सुनहिं जे लोग ।
राम भक्ति दृढ़ पावहिं, बिन वैराग्य जप योग ॥ १२० ॥
यह सो भक्ति आलिङ्गिनी, बिरला जाने भेद ।
भाग होय तो पाइये, समझावे गुरुदेव ॥ १२१ ॥

झूठे सुख को सुख कहे, मानत है मन मोद।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद॥ १२२॥
पाव पलक की सुध नहीं, करे काल का साज।
काल अचानक मारसी, ज्यों तीतर को बाज॥ १२३॥
आये हैं सो जायँगे, राजा रङ्क फ़क़ीर।
एक सिंहासन चढ़ चले, इक बांधे जात जंजीर॥ १२४॥
दुर्लभ मानुष जन्म है, देह न बारम्बार।
तरुवर सो पत्ता झड़े, बहुर न लागे डार॥ १२५॥
देह धरे का गुण यही, देह २ कुछ देह।
कहे कबीरा देह तू, जब लग तेरी देह॥ १२६॥
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह।
निश्चय कर उपकार ही, जीवन का फल येह॥ १२७॥
या दुनिया में आयके, छांड़ि देय तू पैंठ।
लेना होय सो लेय ले, उठी जात है पैंठ॥ १२८॥
नानक नन्हा होय रहो, जैसी नन्ही दूब।
बड़ो घास जल जायगी, दूब खूब की खूब॥ १२९॥
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय।
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुख होय॥ १३०॥

जन्म मरण दुख याद कर, कूड़े काम निवार।
जिन २ पन्थो चालना, सोई २ पन्थ सँवार ॥ १३१ ॥
कबीर खेत किसान का, मिरगों खाया झाड़।
खेत विचारा क्या करे, जो धनी करे नहिं बाड़ ॥ १३२ ॥
जेहि घट प्रीति न प्रेम रस, पुनि रसना नहिं नाम।
ते नर पशु संसार में, उपज मरे बेकाम ॥ १३३ ॥
तुलसी या संसार में, पांच रत्न हैं सार।
सन्त मिलन अरु हरि भजन, दया दीन उपकार ॥ १३४ ॥
काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान।
तुलसी पण्डित मूरखा, दोनों एक समान ॥ १३५ ॥
निज अवगुण गुण राम के, समझे तुलसीदास।
होय भलो कलिकाल में, उभय लोक अनियास ॥ १३६ ॥
आंख कान मुख मूद कर, नाम निरञ्जन लेय।
अन्दर के पट जब खुले, बाहर के पट देय ॥ १३७ ॥
जो तोकूं कांटा बुवे, ताहि बोय तू फूल।
तोकों फूलके फूल हैं, वाको हैं त्रिशूल ॥ १३८ ॥
तेरे भावै कछु करो, भलो बुरो संसार।
नारायण तू बैठ के, अपनो भवन बुहार ॥ १३९ ॥

तनक बड़ाई पायके, मन में अधिक ग़रूर।
नारायण जिन बैठ मग, साहब का घर दूर॥ १४०॥
चात्रिक सुतहिं पढ़ावहीं, आन नीर मत लेय।
मम कुल ये ही रीति है, स्वांति बूंद चित देय॥ १४१॥
जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कब मरहूं कब पायहूं, पूरण परमानन्द॥ १४२॥
धीरे २ रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे केवड़ा, ऋतु आये फल होय॥ १४३॥
जहां दया तहँ धर्म है, जहां लोभ तहां पाप।
जहां क्रोध तहां काल है, जहां क्षमा तहां आप॥ १४४॥
अमृत भरे तन मन वचन, निशि दिन परउपकार।
परगुण मानत मेरु सम, बिरले जन संसार॥ १४५॥
सरस्वती के भण्डार की, बड़ी अपूरब बात।
ज्यों खरचे त्यों २ बढ़े, बिन खरचे घट जात॥ १४६॥
आप बुरो जग है बुरो, भलो भले जग जान।
तजत बहेरा छांह सब, गहत आम की आन॥ १४७॥
सेवक सोई जानिये, देत विपति में सङ्ग।
तन छाया ज्यों धूप में, रहे साथ इक रङ्ग॥ १४८॥

सब से लघु है मांगिबो, यामें फेर न सार।
बलिपै जांचत ही भये, बावन तन करतार ॥ १४६ ॥
जशवँत वास सराय का, क्या सोवे भर नैन।
स्वांस नगारे कूंच के, बाजत हैं दिन रैन ॥ १५० ॥
उठ फरीदा जागरे, जागन की कर चौंप।
ये दम हीरालाल हैं, गिन गिन हरिको सौंप ॥ १५१ ॥
सब से मीठा बोलना, करना परउपकार।
नरायण या जगत में, यह दो बातें सार ॥ १५२ ॥
सम्मन रोवे कौन को, हँसे सो कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं, रहे सो जावनहार ॥ १५३ ॥
जो जाके शरने बसे, जाकी जाको लाज।
जल सोंहीं मछली चढ़े, बहे जायँ गजराज ॥ १५४ ॥
रूखी सूखी खाय के, ठण्डा पानी पीव।
देख पराई चोपड़ी, मत ललचावे जीव ॥ १५५ ॥
गोधन गजधन बाजधन, और रत्न धन खान।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूरि समान ॥ १५६ ॥
गिरिये पर्वत शिखिर ते, परिये धरण मँझार।
मुढ़ सङ्ग नहिं कीजिये, डोबे कालीधार ॥ १५७ ॥

पपिहा प्रण को ना तजे, तजे तो तन वेकाज।
तन छूटे तो कछु नहीं, प्रण छूटे है लाज ॥ १५८ ॥
चोट सुहेली सेल की, लागत लेत उसांस।
चोट सहारे शब्द की, तासु गुरू मैं दास ॥ १५९ ॥
तुलसी मीठे वचन से, सुख उपजे चहुं ओर।
वशीकरण यह मंत्र है, तजदे वचन कठोर॥ १६० ॥
तू तू कहता तू हुआ, मुझ में रही न हूं।
जब आपा परका मिटा, जहां देखूं तहां तूं ॥ १६१ ॥
आयो प्रभु शरणागति, कृपासिन्धु दयाल।
एक अक्षर हरि मन बसे, नानक होत निहाल ॥ १६२ ॥
माया सगी न मन सगा, सगा न यह संसार।
परशुराम या जीव को, सगा सो सिरजनहार ॥ १६३ ॥
जननी जने तो भक्त जन, कै दाता कै शूर।
नाहीं तो तू बांझ रह, काहे गँमावे नूर ॥ १६४ ॥
मैं २ बड़ी बलाय है, सको तो निकसो भाग।
कहे कबीर कब लग रहे, रूई लपेटी आग ॥ १६५ ॥
निष्काम बुद्धि विमल हो, कीरति होउ अडिग।
प्रम भक्ति दृढ़ हिय बसो, सदा प्रभू हो ढिंग ॥ १६६ ॥

पड़ा पपीहा सुरसरी, लगा बधिक का बान ।
मुख मूंदे श्रुति गगन में, निकस गये यों प्रान ॥ १६७ ॥
कबीर चकई निस बीसरे, आन मिले प्रभात ।
जो जन बिछुरे राम से, दिवस मिले नहिं रात ॥ १६८ ॥
मकड़ी उतरे तार से, पुन गह चढ़त सुतार ।
जाकां जासों मन रम्यो, पहुंचत लगे न बार ॥ १६९ ॥
नीच २ सब तर गये, सन्त चरण लौ लीन ।
जातिहि के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ १७० ॥
कबीर मरत २ जग मुआ, मरन न जाना कोय ।
ऐसी मरनी जो मरे, फेर न मरना होय ॥ १७१ ॥
मरजाऊं मांगूं नहीं, निज स्वारथ के काज ।
परमारथ के कारने, मोह न आवे लाज ॥ १७२ ॥
सोना काई ना लगे, रूपा घुन नहिं खाय ।
बुरा भला गुरु भक्त जो, कबहुं नरक नहिं जाय ॥ १७३ ॥
चोरी हिंसा परत्रिया, निन्दा मिथ्या गाल ।
क्रोध ईर्षा मान छल, मन वच तन से टाल ॥ १७४ ॥
तृष्णा चिन्ता दीनता, माया ममता नार ।
ये षट डाकिन पुरुष को, पीवत खून निकार ॥ १७५ ॥

शान्ति दया समता क्षमा, मुदिता विद्या प्रीति।
ये जननी सम पुरुष की, रक्षा करें सुनीति ॥ १७६ ॥
पतितउधारन भयहरन, हरी नाथ के नाथ।
नानक ताहि पिछानिये, सदा बसत तुम साथ ॥ १७७ ॥
कबीर जग में बैरी कोउ नहीं, जो मन शीतल होय।
यह आपा तू डार दे, दया करे सब कोय ॥ १७८ ॥
चिन्ता ताकी कीजिये, जो अनहोनी होय।
यह मारग संसार को, नानक थिर नहिं कोय ॥ १७६ ॥
मारग चलते जो गिरे, ताको नाहीं दोष।
कहे कबीर बैठा रहै, ता सिर करड़े कोस ॥ १८० ॥
पपीहा का प्राण देख के, धीरज रहे न रञ्च।
मरते दम जल में पड़ा, तोउ न बोरो चुञ्च ॥ १८१ ॥
पतिव्रता पति को भजे, ताहि न और सुहाय।
सिंह बच्चा जो लङ्घना, तो भी घास न खाय ॥ १८२ ॥
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अन्त तिहुंकाल।
पलक एक में प्रगट हो, छिन में करूं निहाल ॥ १८३ ॥
यथा अनेकन भेष धरि, नृत्य करे नट कोइ।
सोई २ भाव दिखावही, आपुन होय न सोइ ॥ १८४ ॥

जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव।
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरण कमल की सेव ॥ १८५ ॥

रहता है सवत्र ही, व्यापक एक समान।
पर निज भक्तों के लिये, छोटा है भगवान ॥ १८६ ॥

चौपाई।

छोटा बड़ा कहें जो कुछ हम। फबता है सब तुझे महत्तम ॥
गुड़ सा मीठा है भगवान। बाहर भीतर एक समान ॥
किसका ध्यान करूं सविवेक। जल तरङ्ग से हैं हम एक ॥

दोहा।

भवसागर से तरन का, सीधा यही उपाव।
महादेव के भजन में, चित्त मगन होजाव ॥ १ ॥
शङ्कर सिन्धु अगाध में, नाना दृश्य तरङ्ग।
क्षण भर में होवे उदय, क्षण में होवे भङ्ग ॥ २ ॥
दर्पण में भासै जिमि, नगर बहुत विस्तार।
शङ्कर में भासै तिमि, अनहोना संसार ॥ ३ ॥
ओत प्रोत शिव सबन में, ज्यों कपड़े में सूत।
जो उसको जाने नहीं, सो नर बड़ा कपूत ॥ ४ ॥

जिमि रज्जू अज्ञान से, भाषत काल भुजङ्ग ।
जीव हुआ भाषै तिमि, आतम देव असङ्ग ॥ ५ ॥
अजर अमर निश्चल अकल, सकल कल्यना हीन ।
निराकार निर्विकार है, व्यापक इन्द्रि विहीन ॥ ६ ॥
मैं मेरी जब से मिटी, हटा मोह का फन्द ।
जित देखे उतही दिखे, पूरण परमानन्द ॥ ७ ॥
महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम ।
जेहि कर्मन रम जाहि सन, नाहिं ताहि सन काम ॥ ८ ॥

पद ।

प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म, ऐसो ऋगवेद कहे ।
अहंब्रह्म अस्मि इति, यजुर्वेद यूं कहे ॥
तत्त्वमसि इति सामवेद, यूं बखानत है ।
अयं आत्मा ब्रह्म कहि, अथर्वण यूं लहे है ॥१॥

सोरठा ।

कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करुणा अयन ।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन ॥ १ ॥
मूक होय बाचाल, पंगु चढ़े गिरवर गहन ।
जासु कृपा सु दयालु, द्रवौ सकल कलिमल दहन ॥२॥

राग सिहाना ।

गाइये गणपति जगवन्दन । शङ्कर सुवन भवानी नन्दन ॥
सिद्धिसदन गजबदन बिनायक । कृपासिन्धु तुमहो सबलायक ॥
मोदक प्रिय मुद मङ्गलदाता । विद्याबारिधि बुद्धि बिधाता ॥
मांगत तुलसीदास कर जोरे । बसहु राम सिय मानस मोरे ॥

सोरठा ।

बन्दौं पवनकुमार, खल बन पावक ज्ञान घन ।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धर ॥ १ ॥

सवैया ।

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे ऊधो,
अन्तर बिथा की कथा मेरी सुन लीजिये ।
ब्रज की वे बाला जपैं मेरी जयमाला,
बढ़ी बिरह की ज्वाला तामें तन मन छीजिये ॥
मेरो विश्वास मेरी आश, रस रास मेरी,
मिलवे की प्यास जान सावधान कीजिये ।
प्रीति सूं प्रतीति सूं लिखी है रस रीति सूं,
सो पत्रिका हमारी प्राणप्यारिन कूं दीजिये ॥

कवित्त ।

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास तो तिहारे आमख़ास तो तिहारे हैं।
दीन तो तिहारे मतिहीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं॥
क्रूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,
राचे नूर तो तिहारे सांचे शूर तो तिहारे हैं।
भायक तिहारे यश गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारे हैं॥ १॥

सवैया ।

निशि वासर प्रेम के पन्थ चले,
हिये ते हरि नाम बिसारे नहीं।
घटि वृद्धिय देखि के एक घरी,
धरका जिय में कछु धारे नहीं॥
विधि को विश्वास "ओंकार" कहैं,
अपनो बल बुद्धि बिसारे नहीं।
वही मानस की बड़ी किम्मत है,
जासु जो समय पर हिम्मत हारे नहीं॥ १॥

कवित्त ।

सामिल है पीर में शरीर में न राखें भेद,
अन्तर कपट कछु होय तो उघरि जात ।
ऐसो ठाठ ठाने जाते बिना जन्त्र मन्त्रन तें,
सांपहु को ज़हर उतारे तो उतर जात ॥
ठाकुर कहत यामें कठिन न मानो कछु,
हिम्मत किये ते कौन काज ना सुधर जात ।
चारि जने चारिहि दिशा ते चारि कोने गहि,
मेरु को हिलायें औ उखारें तो उखर जात ॥१॥

सवैया ।

घूमत द्वार मतङ्ग अनेक,
जँजीर जरे मद अम्बु चुआते ।
तीखे तुरङ्ग मनो गति चञ्चल,
पौन की गौनहुं को जो लजाते ॥
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकत,
बाहर भूप खरे न समाते ।
ऐसे भये तो कहा "तुलसी" जो,
पै जानकीनाथ के रङ्ग न राते ॥ १ ॥

छप्पय ।

कबहुंक खग मृग मीन, कबहुं मर्कट तनु धरके ।
कबहुंक सुर नर असुर, नागमय आकृति करके ॥
नटवत लख चौरासी, स्वांग धरि २ मैं आयो ।
हे त्रिभुवन के नाथ, रंभ को कछू न पायो ॥
जो हो प्रसन्न तो देहु अब, मुक्ति दान मांगूं बिहंस ।
जो पै उदास तो कहहु इम, मत धर रे नर स्वांग अस ॥१॥

कवित्त ।

एक स्वांस खाली मत खोयलो खलक बीच,
कीचरु कलङ्क अङ्क धोयले तो धोयले ।
उर अँधियार पाप पुर सों भर्यो है तामें,
ज्ञान की चिरागें चित्त जोयले तो जोयले ॥
मिनसा जन्म वार २ न मिलेगो मूढ़,
पूर्ण प्रभू से प्यारो होयले तो होयले ।
देह क्षणभंगुर यामे जन्म सुधारबो सो,
बीज के झँमके मोती पोयले तो पोयले ॥ १ ॥

कवित्त ।

दाता हु महीप मानधाता हु दिलीप जैसे,
जाके यश अजहुं लों द्वीप २ छाये हैं ।
बली ऐसो बलवान को भयो जहान बिच,
रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं ॥
वाण की कलान में सुजान द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीनदयाल भारत में गाये हैं ।
कैसे २ शूर रचे चातुर बिरञ्चजू ने,
फेर चकचूर कर धूर में मिलाये हैं ॥ २ ॥

पद ।

जिसका कोई न होय हृदय से उसे लगावे,
प्राणीमात्र के लिये प्रेम की ज्योति जगावे ।
सब में विभु को व्याप्त जान सबको अपनावे,
है बस ऐसा वही भक्त की पदवी पावे ॥ १ ॥

पद ।

चोरी हिंसा और व्यभिचार, काया के त्रिय दोष विचार,
निन्दा अरु कटुवाद असत्य, वाणी के यह दूषण सत्य ।

तृष्णा द्वेष बुद्धि अरु क्रोध, त्रिविधि प्रकार तू मनको शोध,
इहि प्रकार नव दूषण त्याग, कर सतसङ्ग खुलेंगे भाग ॥२॥

पद ।

टेक—को याचिये शम्भू तज आन ।

दीनदयाल भक्त आरत हर, सब प्रकार समरथ भगवान ।
दारुण दनुज जगत दुःखदायक, जारियो त्रिपुर एक ही बान ॥
काल कूट ज्वर जरत सुरासर, निजपन लाग कियो विषपान ।
सेवत सुलभ उदार कल्पतरु, पारवती पति परम सुजान ।
देहु काम रिपु राम चरण रति, तुलसीदास कहे कृपानिधान ॥३॥

सोरठ ।

टेक—शिव शिव रटत मन आनन्द ।

जाके सुमिरत विघ्न विनशत, कटत यम को फन्द ।
तीन नेत्र विशाल झलकत, तिलक माथे चन्द ॥ १ ॥
ओढ़ना बाघम्बरा शिव, भणत छबि मकरन्द ।
भूत प्रेत बिताल जङ्गम, लिये फिरे शिव सङ्ग ॥ २ ॥
वृषभ बाहन रुचि धतूरा, भोगता विष भङ्ग ।
पारवतिपति शरण की गति, सूर मन आनन्द ॥ ३ ॥

कवित्त ।

कोऊ तो कहत ब्रह्म नाभि के कमल मध्य,
कोऊ तो कहत ब्रह्म हृदय में प्रकाश है ।
कोऊ तो कहत कण्ठ नासिका के अग्र भाग,
कोऊ तो कहत ब्रह्म भृकुटी में वास है ॥
कोऊ तो कहत ब्रह्म दशवें द्वार बिच,
कोऊ तो कहत भँवर गुफा में निवास है ।
पिण्ड में ब्रह्माण्ड में निरन्तर बिराजे ब्रह्म,
सुन्दर अखण्ड जैसे व्यापक आकाश है ॥ १ ॥

सवैया ।

काम ही न क्रोध जाके लोभ ही न मोह जाके,
मद ही न मत्सर न कोऊ न बिकारी है ।
दुःख ही न सुख मानै पाप ही न पुण्य जानै,
हर्ष न शोक आनै देह ही तें न्यारो है ॥
निन्दा न प्रशंसा करै राग ही न द्वेष धरै,
लेन ही न देन जाके, कछु न पसारो है ।
सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध ताकी,
ऐसा कोऊ साधु सो तो रामजी कूं प्यारो है ॥१॥

सवैया ।

प्रथम सुयश लेत शील हू सन्तोष लेत,
क्षमा दया धर्म लेत पाप से डरतु है।
इन्द्रिय कूं घेरी लेत मन ही कूं फेरी लेत,
योगकि युगति लेत ध्यान ही धरतु है॥
गुरु को वचन लेत हरिजी को नाम लेत,
आतमा को शोधि लेत भवजल तरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु देत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन लेबो ही करतु है॥ २॥
सांचो उपदेश देत भलि २ सीख देत,
समता सुबुद्धि देत कुमति हरतु है।
मारग दिखात देत भावहुं भगति देत,
प्रेम को प्रतीत देत अमरा भरतु है॥
ज्ञान देत ध्यान देत आतम विचार देत,
ब्रह्म कूं बताय देत ब्रह्म में चरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु लेत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन देबो ही करतु है॥ ३॥

मेरी देह मेरी गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धन माल मैं तो बहुविधि भारो हूं।
मेरे सब सेवक हुक्म मेरो कोऊ मैटे नाहीं,
मेरी युवति को मैं तो अधिक प्यारो हूं॥
मेरो वंश ऊँचो मेरे बाप दादा ऐसे भये,
करत बड़ाई मैं तो जगत उजारो हूं।
सुन्दर कहत मेरो मेरो ही जानै शठ,
ऐसे नहिं जाने मैं तो काल ही को चारो हूं॥४॥

कवित्त ।

ब्रह्म तो वही है जौन सच्चिदानन्द घन,
निर्विकार निर्विकल्प नित ही प्रकाशै है।
माया तो वही है जौन रज तम सत,
गुणधार नाना नाम रूप जिनकै बिनाशै है॥
ईश्वर तो वही है निज रूप को न भूले कभी,
माया गहे माया सो पृथक् उजासै है।
जीव तो वही है जो अविद्या को सँयोग पाय,
भूले निज रूप भ्रम फांस ना निकासै है॥ १॥

जाको शुद्ध हियो ताको अनुभव तुम्हारो होत,
नाथ निज तेज ही से मायागुण नासी है।
जगत के व्यापी निज जापी को प्रतापी करो,
नाम रूप आपके अनन्त दिव्य भासी है॥
आपके समान नहीं अधिक कहांते होय,
अहङ्कार क्षार होत ध्याये सुखराशी है।
काल त्रास नासी तत्काल कर निहाल देत,
राजे रघुराज जैसे अवध विलासी है॥२॥
आदि है न अन्त है अगमरू अज महापावन,
प्रसङ्ग औ अलख प्रमाण अप्रमाण है।
एक है प्रकाश है पूरण महाकाश,
विभु निर्गुण निरञ्जन है चिदानन्द ज्ञान है॥
नित्य है अमर अविनाशो औ अजर सदा,
अव्यक्त निर्विकल्परु अवाच्य निर्वान है।
विश्व को कर्तार शब्द ओंकार है वेदरूप,
पुराण पुरुष विभु एक भगवान है॥ ३॥
मोर मुकुट वारो धर भेष नट वारो,
छोटी लोल लट वारो जगत उजारो है।

सांवरे वर्ण वारो मुरली धरन वारो,
सङ्कटहरन वारो नन्दजू को प्यारो है ॥
दानव दलन वारो छवि को छलन वारो,
मटक चलन वारो पोष उर धारो है।
कंस को दलन वारो भृगुलता लक्ष वारो,
मोरपङ्ख वारो रखवारो सो हमारो है ॥ ४ ॥

चेतावनी ।

जो यह निर्गुण ध्यान नहीं ह्वै, तो सगुण ईश कर मनका थाम।
सगुण उपासन हूं नहिं ह्वै, तो करि निष्काम करम भज राम॥
जो निष्काम कर्म नहिं ह्वै, तो करिये शुभ कर्म सकाम।
जो सकाम कर्म हू नहिं होवे, तो शठ वार वार मर जावँ॥

दोहे ।

होतो तो रहतो नहीं, जरतो वाके सङ्ग ।
प्रीति पुरानी कारने, भस्म सुवावत गङ्ग ॥ १ ॥
होतो तो रहतो नहीं, जलतो वाके सङ्ग।
कपट प्रीति के कारणे, भस्म रमावत अङ्ग ॥ २ ॥

छप्पय ।

तृण जो दन्त तर धरहिं, तिनहि मारत न सबल कोई ।
हम नितप्रति तृण चरहिं, बैन उच्चरहिं दीन होई ॥
हिन्दूहि मधुर न देहिं, कटुक तुरकन न पिलावहिं ।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं, बच्छ महिथम्बन जावहिं ॥
सुन शाह अकबर, अरज़ यह, करत गौ जोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत, मुये चाम सेवहुं चरन ॥१॥

कवित्त ।

गोबिन्द के कीये जीव जात हैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्द ते ।
गोबिन्द के कीये जीव वश परे कर्मन के,
गुरु के निवाज सूं ते फिरत स्वच्छन्द ते ॥
गोबिन्द के कीये जीव डूबत भवसागर में,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुख द्वन्द ते ।
और हूं कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरुकी तो महिमा अधिक महिमा गोबिन्द ते ॥१॥

छन्द ।

राम है मातु पितु सुत बन्धु, वही सङ्गी सखा गुरु राम सनेही ।
राम को मोय भरोसो है राम को, रङ्गी रुच राखो न केही ॥
जीवत राम है मुये पुन राम, राम सदा रघुनाथकी गति जेही ।
सोई जिये जग में तुलसी, न तो डोलत और मुये धर देही ॥

कुण्डलिया ।

पृथ्वी पवन आकाश है, नीर अग्नि शशि भान ।
कपोत गुरु अजगर लख्यो, और सिन्धु को जान ॥
और सिन्धु को जान, पतङ्गी भँवरा कहिये ।
माखी हाथी मृग मीन, अरु पिङ्गला लहिये ॥
चिन्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावनहार ।
सांप माकरी भृङ्ग ज्यों, चौबीसों उरधार ॥ १ ॥

कवित्त ।

मैं तो हूं पतित आप पावन पतित नाथ,
पावन पतित हो तो पातक हरोहिगे ।
मैं तो महादीन आप दीनबन्धु दीनानाथ,
दीनबन्धु हो तो दया जिय में धरोहिगे ॥

मैं तो हूं गरीब आप तारक गरीबन के,
तारक गरीब हो तो विरद बरोहिंगे।
मेरी करणी पै कछु मुकुर न कीजे कान्ह,
करुणानिधान हो तो करुणा करोहिंगे॥ १॥
कैसे तुम गणिका के अवगुण ना गिने नाथ,
कैसे तुम भीलनी के जूठे बेर खाये हो।
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी,
कैसे तुम गज के काज नङ्गे पग धाये हो॥
कैसे तुम सुदामा के छिन में दरिद्र हरे,
कैसे तुम उग्रसेन बन्दी ते छुड़ाये हो।
मेरी बेर एतो देर कान मूंद रहे नाथ,
दीनबन्धु दीनानाथ काहे को कहाये हो॥ २॥
गिरि को उठाय ब्रज गोप को बचाय लियो,
अनल ते उबारो पुन बालक मँजारी को।
गज की अरज सुन ग्राह ते छुड़ाय लीनो,
राख्यो व्रत नेम धर्म पाण्डव की नारी को॥
राख्यो गज घन्ट तले बालक बिहङ्गम को,
राख्यो प्रण भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को।

त्रिविधा दुःखहारी निज सन्तन सुखकारी,
एक मोहि तो भरोसो भारी ऐसे गिरधारीको ॥३॥
खांस के भरोसे गठ मांस में निवास कियो,
आशा मन माहीं राखी मानन शरीरां की ।
बड़े २ शूरवीर देख छोड़ गये मूरख,
रही ना निशानी जग शाहां ओ वजीरां की ॥
भज दुखभञ्जन निरञ्जन का रेरे मूढ़,
नित्य रोज सुध ले जो पाहनमें कीरां की ।
कहें कवि धारामल सुमिरन की यही पल,
एक २ घड़ी जात लाख २ हीरां की ॥ ४ ॥
दोनता को त्याग नर अपना स्वरूप देख,
तूं तो शुद्ध ब्रह्म अज हृदय को प्रकाशी है ।
अपने अज्ञान तैं जगत सब तू ही रचे,
सर्व को संहार करे आप अविनाशी है ॥
मिथ्या परपञ्च देख दुःख जिन आन जीये,
देवन को देव तू तो सब सुखराशी है ।
जीव जग ईश होय माया से प्रभावे तू ही,
जैसे रज्जू सांप सीप रूप ह्वै प्रभासी है ॥५॥

श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन,
आठों याम ऊधो यहां श्याम ही सों काम है।
श्याम हीये श्याम जीये श्याम बिन नाहिं तीये,
आंधरे की लकड़ी अधार नाम श्याम है॥
श्याम गति श्याम रति श्याम ही प्रताप पति,
श्याम सुखदाई से भुलाये घर धाम है।
तुम भये बौरे यहां पाति लाये दौरे दौरे,
योग कहां राखें हम रोम रोम श्याम है॥ ६॥
पुरुष रतन गुण गण को सदन पुन,
पौरुष को आय तन परम प्रवीणा है।
सारी धरा को शृङ्गार जड़ाजड़ को सरदार,
भोग मोक्ष को भण्डार अरु चारु लखि लीना है॥
चतुर बदन को चतुर हम चीनो तब प्रथम,
जो ऐसे नर को उतपत कीना है।
ताके पाछे तत्क्षण नष्ट करे हा हा,
कष्ट इति विधि विधिनाको पण्डित न चीना है॥७॥
दीप में पतङ्ग परे जरे न प्रताप जाने,
मीन से अज्ञान भये कुण्डी मिले मांस को।

गज गजी हेत परयो खात २ अङ्कुश को,
राग में कुरङ्ग राग करे निज नाश को ॥
पङ्कज की गन्ध बीच नीच भृङ्ग मीच गहे इति,
आदि अज्ञ नाश करें निज स्वांस को ।
अहो हा सघन महा मोह को प्रताप लहा,
शुभाशुभ जानो पै न हनो भोग आशा को ॥ ८ ॥
सोम नाम विप्रवर गिरिजा के वर कर लीनो,
सुधा फल कर दीनों नरनाह के ।
भूपति सुपतनी को रानी निज मीत की को,
ताने दीनों गीतकी को नीको फल चाह के ॥
आगे गणिका सरागे धरापति आगे धरा,
नरनाथ माथ धुना सुन धुना ताहि के ।
हाहा कामिनी के हित हते कामिनी के,
अब ताहे तजो ताहे भजो शीश शशी जायके ॥ ९ ॥
ग्रन्थन के ज्ञाते माते मत्सर कीच बीच,
धरा नाथ मद साथ भरे दरशात हैं ।
दूषण चमोरे मोरे भूषण सुभाषण को,
पण्डित भूपाल तो न सुने मेरी बात हैं ॥

पुना आन जन्तु जेते दुखी मूढ़ दीन तेते,
मोते सकुचात हम ओते सकुचात हैं।
पात्र विना भाषे राखे हवन को राखे तैसे,
जीरण मो गात सोतो बात होत जात हैं ॥१०॥

सवैया।

तातका शोच न मातका शोच न शोच भयो मोय अवध तजेको।
बनवास लियेको शोच नहीं और शोच नहीं मोहि पिता मरेको॥
सिया हरे को शोच नहीं और शोच नहीं मोय गृद्ध मरे को।
बालि हतेको शोच नहीं और शोच नहीं मोय लंका जरे को॥
लक्ष्मण मूर्छित शोच नहीं और शोच नहीं मोय विपत्ति परेको।
शोच तो है इक है तुलसी मोहि भारी विभीषण पैज दियेको॥१॥
बातहिं से दशरत्थ मरे अरु बातहिं राम फिरे बन जाई।
बातहिं से हरिचन्द सहे दुख बातहिं राज्य दियो मुनिराई॥
रे मन बात विचार सदा कहु बात की गात में राख सचाई।
बात ठिकाने नहीं जिनकी तिन बाप ठिकाने न जानहुं भाई॥२॥
पूरण ब्रह्म लखा जिन केवल एक अखण्ड रमा भवसारे।
रूप न रेख अलेख सदा यम भाषत हैं जिनको श्रुति चारे॥

ज्ञान दिनेश चढ़ा जिनके मत मोह निशा के मिटे सब तारे।
सो गुरु हैं हमरे उरमें जिन पाप महानिधि पार उतारे ॥ ३ ॥
एक अखण्डित ब्रह्म असंग अजन्म अदृश्य अरूप अनामें।
मूल अज्ञान न सूक्ष्म स्थूल समष्टि न व्यष्टि पन्थो नहीं तामें ॥
ईश न सूत्र विराट न प्राज्ञ तैजस विश्व स्वरूप न जामें।
बन्ध न मोक्ष न भोग न योग नहीं कुछ वामेरु है सब वामें ॥४॥
जाग्रत में जो प्रपञ्च प्रभाषत सो सब बुद्धि विलास बन्यो है।
ज्यों सुपने मेंहि भोग्य न भोग तऊ एक चित्र विचित्र जन्यो है॥
लीन सुषुप्ति में मति होतई भेद भगे एक रूप सुन्यो है।
बुद्धि रच्यो जो मनोरथमात्र सु निश्चित बुद्धि प्रकाश बन्यो है ॥५॥
ब्रह्म निरीह निरामय निर्गुण एक निरंजन और न भाषे।
ब्रह्म अखण्डित है अध ऊपर बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे ॥
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग ब्रह्म ही साहिब ब्रह्म ही दासे।
सुन्दर और कछू मत जानहुं ब्रह्म ही देखत ब्रह्म तमासे ॥ ६ ॥
ये सब भाव मिटे तबहीं जब कोविद की नर संगति पावे।
भाष्य शारीरक आदि पढ़े कठ केन कथा मति संग मिलावे ॥

संयम योग समाधि करे यम नेम निरन्तर लक्ष्य बनावे।
ब्रह्म ही ब्रह्म चहूं दिश देखत या विधिते पद निर्भय पावे ॥ ७ ॥
जो फल थे तन मानव के वह लाभ किये हमने अब सारे।
आनन्द ब्रह्म सुधानिधि को लख दूर भये भव के भय भारे॥
क्षुद्र नदी सम मेट दियो वपु ब्रह्म पयोनिधि माहिं पधारे।
प्रत्यक रूप भई ममता यह पुत्रबधू अब नाहिं हमारे ॥ ८ ॥

सुत के हित प्यार करे जग में कहो कौन करे धन के हित प्यारा। हित नार न प्यार करे जग में इमि ढूंढ़ लिया हमने भव सारा॥ हित आतम प्यार करें सब ही यह आतम है सब से अति प्यारा। वह आनन्दरूप पयोनिधि है उसके बिन और नहीं कोऊ प्यारा ॥ ९ ॥

वसु पूरण हो वसुधा सगरी पुन और पदारथ हों सुख-कारी। गजगामिनी भामिनी हो मधुरा मुख की छवि चन्द्र-कला जिन टारी॥ शुभ व्यञ्जन होहिं अहार घने जिनको रसते तनु पुष्टि अपारी। सुख आतम नाहिं लहें जबहीं तब होहिं हलाहल के सम चारी ॥ १० ॥

वह आनँद नाह मिले धन से और नाह मिले वह त्याग कमाये। तन तीरथ त्याग करे न मिले न मिले हरिके पुर देह

तपाये ॥ घन कानन घोर निवास करें अथवा गिरिकन्दर माहिं बसाये। रवि आतम एक सुधा धन है पर जो रति नाह सुनाह सताये ॥ ११ ॥

जिनको नित मैं चितमो चितमो तिन कोरति मो तन माहिं रतीना। वह आन पुमान की संग रती पुनि ता मन में गणिका गृह कीना ॥ धिक् है अयला भृत् कन्दर्पै अरु मोहि धिकार जो मार अधीना। इति रीत समूह को प्रीति तजो नृप होय योगीश्वर ईश्वर चीना ॥ १२ ॥

ये श्रुति ज्ञान सुजानन के अभिमान मदादि विकार निवारे। के चित् मो सम नीचनके चित में बहुमान मदादिक धारे ॥ शून्य यथा मठ साधुन को अति मोक्ष को साधन दोष महारे। सो हमसे मदनातुर को अति काम को कारण वाम समारे ॥ १३ ॥

कवित्त।

बन में रहत नित सिवरी कहत,
सब चहत टहल साधु तन न्यूनताई है।
रजनी के शेष ऋषि आश्रम प्रवेश करी,
लकरीन बोझ धरी आवे मनभाई है ॥

न्हाइबे को मग झारी कांकरिन बीन डारि,
बेगि उठ जाय नेकु जाति न लखाई है।
उठत सवार कहैं कौन धौं बुहारि गयो,
भयो हिये शोच कोऊ बड़ो सुखदाई है ॥ १ ॥
बड़े ही अलंग वे मतङ्ग रसरंग भरे,
धरे देखि बोझ कह्यो कौन चोर आयो है।
करे नित चोरी अहो गहो बाहि एक दिन,
बिना पाये प्रीति वाको मन भरमायो है ॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान,
आय गई गहि लई कांपै तन नायो है।
देखतहि ऋषि जल धारा चली नैनन ते,
बैनन सों कह्यो जात कहा कछु पायो है ॥ २ ॥
दीठिहूं न सोंही होत मानि तन गोत छोत,
परी जाय सोच सोत कैसे कै निकारिये।
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके,
केऊ कोटि विप्रताई यापै वारि डारिये ॥
दियो वास आश्रम में श्रवण में नाम दियो,
कियो मुनि रोष सेवा कीनी पाति न्यारिये।

शिवरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो,
मैं तो परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये ॥ ३ ॥
गुरु के वियोग हिये दारुण ले शोग दिये,
जियो नाहिं जात तोपै राम आस लागी है ।
न्हायवे के घाट निशि जात ही बुहारि सब,
भई यों अबार ऋषि देखि व्यथा पागी है ॥
छयो गयो नेकु बहु खीझत अनेक भांति,
करिकै विवेक गयो न्हान यह भागी है ।
जलसों रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो,
नयो पायो शोच तऊ जाने न अभागी है ॥ ४ ॥
ल्यावे वन बेर लागी राम की औसेर फल,
चाखे धरि राखे फेरि मीठे उन्हीं योग हैं ।
मारग में रहे जाइ लोचन बिछाय कबू,
आवें रघुराई दृग पावें निज भोग हैं ॥
ऐसे ही बहुत दिन बीते मग जोवतहिं,
आय गये औचकहि मिटे सब शोग हैं ।
जोपै तन न्यूनताई आई सुधि छीपि जाई,
पूंछे आप स्योरि कहां ठाढ़े और लोग हैं ॥ ५ ॥

पूंछि २ आये तहां शिवरी स्थान जहां,
कहां वह भागवती देखों दृग प्यासे हैं।
आय गई आश्रम में जानि कै पधारे आप,
दूरिहिते साष्टांग करी चक्षु भासे हैं॥
हर्षकि उठाय लई व्यथा तन दूरि गई,
नई नीर झरी नैन परे प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खाय के सराय वेई,
कह्यो कहा कहों मेरे मग दुःख नासे हैं॥ ६॥
करत हैं शोच सब बैठे ऋष आश्रम में,
जलको बिगर सो सुधार कैसे कीजिये।
आवत सुने हैं वन पथ रघुनाथ कहूं,
आवें जब याको भेद भले कह दीजिये॥
इतने ही मांझ सुनि स्यौरी के विराज आनि,
गयो अभिमान चलो पग गहि लीजिये।
आय खुनसाय कहि नीर को उपाय कहो,
गहो पग भीलनि के स्वच्छ तन भीजिये॥ ७॥
रतन अपार सार सागर उधार किये,
लिये हित चाय के बनाय माला करी है।

सब सुख साज रघुनाथ महाराजजू को,
भक्त सों बिभीषणजू आनि भेंट धरी है ॥
सभा ही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है ।
राम बिन काम कौन फोरि मनी दीने डारि,
खोलि त्वचा नामहिं दिखायो बुद्धि हरी है ॥८॥

छप्पय ।

जय जय मीन बराह कमठ नर हरि बलि वामन ।
परशुराम रघुवीर कृष्ण कीरति जग पावन ॥
बुद्ध कलंकी व्यास पृथू हरि हंस मन्वंतर ।
यज्ञ ऋषभ हयग्रीव ध्रुव वरदेन धन्वंतर ॥
बदरीपति दत्त कपिलदेव, सनकादिक करुणा करो ।
चौबीस रूप लीला रुचिर, अंग्रराम उर पद धरो ॥१॥
विधि नारद शंकर सनकादिक कपिल देव मनु भूप ।
नर हरिदास जनक भीष्म रु बलि शुक मुनि धर्म स्वरूप ॥
अंतरंग अनुचर हरिजू के जो इनको यश गावे ।
आदि अंतलों मंगल तिनके श्रोता वक्ता पावे ॥
अजामील प्रसंग यह निर्णय परमधर्म को जान ।
इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान ॥२॥

कवित्त ।

न्हाता हि बिदुर नारि अंगनि प्रक्षाल करि,
आये गण द्वार कृष्ण बोलिकै सुनायो है।
सुनत हि सुर सुधि डारलै निडर मानो,
राख्यो मद भरि दौरि आनिकै चितायो है॥
डारि दियो पीतपट कटि लपटाय लियो,
हियो सकुचायो वेष वेग ही बनायो है।
बैठी ढिंग आय केरा छीलि छिलका खवाइ,
आयो पति खीज्यो दुःख कोटि गुनो पायो है॥१॥
प्रेम को विचारि आप लागे फलसार देन,
चैन पायो हिये नारी बड़ी दुःखदाई है।
बोले रीझि श्याम तुम कीन बड़ो काम,
तो पै स्वाद अभिराम कैसी वक्स मैं न पाई है॥
तिया सकुचाई कर काटि डारों हाय,
प्राणप्यारे को खवाय छीलि छिलका निभाई है।
हित ही की बात दोऊ कोऊ पार पावै नाहिं,
नीके ले कडावै सोई जाने यह गाई है॥ २॥

कुंती करतूति कैसे करै कौन भूत प्राणी,
मांगत विपत्ति जासों भाजें सब जन है।
देख्यो मुख चाहौं लाल देखे बिन हिये साल,
हूजिये कृपालु नहिं दीजै बास बन है॥
देखि बिकलाई प्रभु आंखि भरि आई फिरि,
घरहि को ल्याई कृष्ण प्राण तन धन है।
श्रवण वियोग सुनि तनक न गयो,
भयो वपु न्यारो अहो एही सांचोपन है॥ ३॥

भजन १

टेक—मन परदेशी हो ये नहीं अपना देश।
सत् का कहना सत् में रहना, आनन्दरूप किसी का भय ना।
जो कोई कहै सभी की सहना, ये ही रटन हमेश॥ १॥
गुरु का वचन सत्य कर मानो, जगत् जाल झूंठा कर जानो।
तत्त्वमसि का रूप पिछानो, कट जाय करम कलेश॥ २॥
जो दीखे सो रूप हमारा, कोई नहीं है हमसे न्यारा।
मित्र और शत्रु कोई न हमारा, मिट गये राग और द्वेश॥३॥
शाह गुरू शुकदेव विराजै, चरणदास चरणों में साजे।
गुरु के वचन कभी नहीं त्यागे, यही सत्य उपदेश॥ ४॥

झंझोटी २

टेक—अब मैं अपने राम को रिझाऊँ।

डार पात के हाथ न लाऊं, ना कोई वृक्ष सताऊं।
पात पात में साहिब मेरा, झुक कर शीश नवाऊं ॥ १ ॥

गङ्गा जाऊं न यमुना जाऊं, ना कोई तीरथ न्हाऊं।
अठ सठ तीरथ हैं घट भीतर, वाही में मल २ न्हाऊं ॥२॥

औषधि लाऊं न बूटी लाऊं, ना कोई वैद्य बुलाऊं।
पूरण वैद्य मिले अविनाशी, उनको ही नबज़ दिखाऊं ॥ ३ ॥

ज्ञान कुठारा कसकर बांधू, सुरति कमान चढ़ाऊं।
पांच चोर हैं या घट भीतर, उनको मार गिराऊं ॥ ४ ॥

योगी हो ना जटा बढ़ाऊं, ना मैं अङ्ग बिभूत रमाऊं।
जिस रँग रङ्गे आप बिधाता, वाही में आनन्द मनाऊं ॥ ५ ॥

गज़ल ३

टेक—इतना तो करना स्वामी जब जान तन से निकले।
गोबिन्द नाम कहकर, मेरे प्राण तन से निकले ॥

श्रीगङ्गाजी का तट हो, या यमुनाजी का वट हो।
और सांवरा निकट हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ १ ॥

श्रीवृन्दावन का स्थल हो, मेरे मुख में तुलसीदल हो।

विष्णु चरण का जल हो, फिर प्राण तनसे निकले ॥ २ ॥

सन्मुख सांवरा खड़ा हो, बंशी का सुर भरा हो।

तिरछा चरण धरा हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ ३ ॥

शिर सोहना मुकुट हो, मुखड़े पै काली लट हो।

यही ध्यान मेरे घट हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ ४ ॥

उस वक्त जल्दी आना, ना कौल भूल जाना।

नूपुर की धुनि सुनाना, फिर प्राण तन से निकले ॥ ५ ॥

मेरे प्राण निकलें सुख से, तेरा नाम निकले मुख से।

बच जाऊं घोर दुःख से, फिर प्राण तन से निकले ॥ ६ ॥

जब कण्ठ प्राण आवे, कोई रोग ना सतावे।

तू दर्श यदि दिखावे, फिर प्राण तन से निकले ॥ ७ ॥

यह नेकसी अरज़ है, मानो तो क्या हरज है।

कुछ तेरा भी फरज़ है, फिर प्राण तन से निकले ॥ ८ ॥

शब्द ४

टेक—हमारे प्रभु अवगुण चित ना धरो।

समदर्शी है नाम तुम्हारो, चाहे तो पार करो ॥

इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो।
जब मिल गयो तब एक रूप भयो, गङ्गा नाम परो ॥१॥
एक लोहा पूजा में राखो, एक घर बधिक परो।
ऊंच नीच पारस नहीं जाने, कञ्चन करत खरो ॥२॥
अबकी बेर मोहि नाथ उबारो, नहिं प्रण जात टरो।
यह माया भ्रमजाल निवारो, सूरदास सगरो ॥३॥

भजन ५

दीनानाथ दयानिधि स्वामी, कौन भांति मैं तुम्हें रिझाऊं ॥टेक॥
श्रीगङ्गा चरणों से निकसी, शुचो नीर कहां से प्रभु लाऊं।
कामधेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे, कौनसो पदारथ भोग लगाऊं ॥१॥
चार वेद तुम मुख से भाषे, और कहा प्रभु पाठ सुनाऊं।
अनहद बाजे बाजत तुम्हारे, ताल मृदङ्ग क्या शङ्ख बजाऊं ॥२॥
कोटि भानु थारे नख की शोभा, दीपक ले प्रभु कहा दिखाऊं।
लक्ष्मी थारी चरणनकी चेरी, कौन द्रव्य प्रभु भेट चढ़ाऊं ॥३॥
तुम तिरलोकी के कर्ता हर्ता, तुम्हें छोड़ प्रभु कौन पै जाऊं।
सूर श्याम प्रभु बिपत विडारन, मनवांछित फल पाऊं ॥४॥

शब्द ६

टेक—हमारे प्रभु एक तुम ही ओंकार।
मात पिता गुरु बन्धु सहोदर, धन विद्या परिवार ॥

मन बल बुद्धि प्राण तुम ही हो, नयनन में उजियार।
हरि होकर हरे रङ्ग में दीसो, पत्र पुष्प फल डार ॥ १ ॥
धरणी अकाश शशी अरु तारे, बिजली में चमकार।
ऊपर नीचे पर्वत सागर, सब तुम अपरम्पार ॥ २ ॥
तुमही सूरज में हो गरजो, बर्षो अमृत धार।
एक धुनी हो तुम से सब की, तुमरा वार न पार ॥ ३ ॥
सुन्दर शक्ति विकाश शुद्धता, हमको दे दातार।
काम क्रोध मद लोभ निवारो, परमानन्द हो प्यार ॥ ४ ॥

भजन ७

टेक—लज्जा मेरी राखो श्याम हरी।
कीनो कठिन दुशासन मोय से, गह कैसों पकड़ी ॥
आगे सभा दुष्ट दुर्योधन, चाहत नगन करी।
पांचो पण्डा सभी बल हारे, इनसे कछु न सरी ॥ १ ॥
भीष्म द्रोण बिदुर भये विस्मय, इव सब मौन धरी।
अब नहीं मात पिता सुत बान्धव, एक टेक तुम्हरी ॥ २ ॥
बसन प्रवाह दिये करुणानिधि, सेना हार परी।
सूरदास जब सिंह शरण लई, स्यारों की क्या है डरी ॥ ३ ॥

भजन ८

टेक—किन तेरो गोबिन्द नाम धरो।

लेन देन के तुम हितकारो, मोते कछु ना सरो ॥ १ ॥

विप्र सुदामा कियो अयाचक, तन्दुल भेट धरो ॥ २ ॥

द्रुपदसुता की तुम पति राखी, अम्बर दान करो ॥ ३ ॥

सन्दीपन के तुम सुत लाये, विद्या पाठ पढ़ो ॥ ४ ॥

सूर की बिरियां निठुर होय बैठे, कानन मूंद धरो ॥ ५ ॥

भजन ९

टेक—अरे मन तू गोबिन्द के गुन गानारे।

नाहक चिन्ता करता डोले, जो पाना सो खाना रे ॥ १ ॥

झूठो धाम झूठी है दौलत, काहे चित्त फँसना रे ॥ २ ॥

अन्त समय कोई काम न आवे, हाथ पसारे जाना रे ॥ ३ ॥

कोटि यतन चाहे करले मूरख, पच २ कर मरजाना रे ॥ ४ ॥

लो ललाट लिखा सोई मिलि है, अधिक ना मिले दाना रे ॥ ५ ॥

काम क्रोध का पहिन चोलना, काहे को इतराना रे ॥ ६ ॥

राधा माधव हित सो भजले, याते हो कल्याना रे ॥ ७ ॥

भजन १०

जगदीश्वर तुम्हारा सहारा हमें, यहां दीखे न कोई हमारा हमें ।
गर्भ यातना के संकट से, करके कृपा जो उबारा हमें ॥ १ ॥
दांत नहीं थे जब दूध दियो तब, फिर भी कभी न बिसारा हमें ॥२॥
सदा रह्यो साथी घट भीतर, पलभर भी करते न न्यारा हमें ॥३॥
जो कुछ सुख तुम देहु दयाकर, क्या कोई देगा बिचारा हमें ॥४॥
धर्मदास कहे भव वारिधि से, पार कबीर उतारा हमें ॥ ५ ॥

ग़ज़ल ११

आलम में किसका डर है, जिसपर नजर हो तेरी ।
बेशक वह बेखतर है, जिसपर मेहर हो तेरी ॥
दुशमन न कोई उसका, होवे तू दोस्त जिसका ।
दुनिया ही यार होवे, हां जब मदद हो तेरी ॥
दरदो अलम वहां के, ऐब वो गुनाह जहांके ।
कोई न पास आवे, जिसको पनाह हो तेरी ॥
राई से कोह करदे, ख़ाली को दममें भरदे ।
थोड़े से तू बहुत दे, पर जब रज़ा हो तेरी ॥

शब्द १२

कछु लेना न देना मगन रहना ॥ टेक ॥

पांच तत्त्व का बना पींजरा, जामें बोले मेरी मैना ॥ १ ॥

तेरो पिया तेरे घट में बसत है, सखी खोलकर देखो नैना ॥२॥

गहरी नदिया नाव पुरानी, खेवटिया से मिले रहना ॥ ३ ॥

कहें कबीर सुनों भाई साधो, गुरुके चरणमें लिपट रहना ॥ ४ ॥

ख्याल १३

सच्चा सत्गुरु मिले तो चेला, पलट के कीड़े से भृङ्ग होकर।
समाया अपने में आप फिर मैं, मिसाले जलकी तरँग होकर॥
इड़ा पिंगला सुषम्ना, तीनों नाड़ी के सङ्ग होकर।
हमेशा बहती है यह त्रिवेणी, हमारी भृकुटी में गङ्ग होकर॥
यह दिलको धोया मैं खूब मलमल, मिसाले दर्पणके रङ्ग होकर।
दुई दूरकर हुआ मैं इकता, दुरङ्ग से फिर इकरङ्ग होकर॥
रूप सच्चिदानन्द है मेरा, कहां ज़बां से सोऽहं होकर।
समाया अपने में आप फिर मैं, मिसाले जलकी तरङ्ग होकर॥
दिल तायर के कतर लिये पर, हुआ वह बेपर अपङ्ग होकर।
क्या मजाल है उड़ान भरले, हमारा दिल ये मतङ्ग होकर॥

ज्ञान का अङ्कुश लगाया हमने, हमेशा सन्तों के संग होकर।
बिन सत्सङ्गति कोई न सुधरे, कुसङ्ग छोड़ा सुसङ्ग होकर॥
नाभि कमल से गया मैं सीधा, ब्रह्म नाल की सुरङ्ग होकर।
शून्य शिखरमें सोया मैं सुखसे, जन्म मरणसे निसङ्ग होकर॥
क्या मजाल है वहां काल की, जो देखे मुझे बदरङ्ग होकर।
योगी जुगत जी जीवें हमेशा, युगान युग उस प्रसङ्ग होकर
सूरजगिरि कहें संन्यासीसे, अड़े कोई फुकरा मलँग होकर।
तो खूब ठहरे बराबरी की, सभा में शब्दों से जङ्ग होकर॥
संसारी नहिं अड़े सन्त से, अड़े कोई नङ्गा निहङ्ग होकर।
आखिरको फिर जले ज्ञान बिन, मिसाले दीपक पतङ्ग होकर।
कवितागिरि कहें कविताईको, ढङ्गसे मतकर कुढङ्ग होकर॥

शब्द १४

मैं वारि जाऊं सतगुरु की, मेरो कियो भरम सब दूर॥ टेक॥
प्यालो प्याओ प्रेम को, घोर सजीवनमूर।
चढ़ी खुमारी नाम की, होगई चकनाचूर॥ १॥
निमल प्रकाश अकाश, लख्यो बिना शशि शूर।
मगन भयो मन गगन में, सुनके अनहद तूर॥ २॥

ममता घट समता बढ़ी, उर अन्तर भरपूर।
राग द्वेष जग से मिटो, अब मन भयो मजूर ॥ ३ ॥
शब्द सुनत यमदूत के, मुख में लागी धूर।
आय मिले धर्मदास को, सत्गुरु हाल हजूर ॥ ५ ॥

शब्द १५

मरना तुम्हें जरूर, गुरु कोई धारो रे ॥ टेक ॥
बिरले जीव वचन गुरु माना, उनको चढ़ा सरूर ॥ १ ॥
शान्ति सरोवर मज्जन कीना, छोड़ा सभी ग़रूर ॥ २ ॥
अन्तर दृष्टि घट भीतर, निरखा झिलमिल नूर ॥ ३ ॥
पद्मदास फिर सत्यलोक में, निरखा कुल हजूर ॥ ४ ॥

शब्द १६

हमारे गुरु ने दीनी है ज्ञान जड़ी ॥ टेक ॥
यह तो जड़ी मोय प्यारी लागे, अमृत रस की भरी ॥ १ ॥
काया नगर में अधर एक बँगला, वामें गुप्त धरी ॥ २ ॥
पांच नाग पच्चीस नागिनो, सूंघत तुरत मरी ॥ ३ ॥
इस काली ने सब जग खाया, सत्गुरु देख डरी ॥ ४ ॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, ले परिवार तरो ॥ ५ ॥

शब्द १७

सखी मेरे जगे पूर्बले भाग, आज गुरु दर्श दिखाय दियोरी ॥टेक॥
सब से तोड़ एक सँग जोड़ी, हमारी अटल धुनि रही लाग।
जब सत्गुरु मेरे अंगना में आये, हमारे भरम भूत गये भाग ॥
घर अँगना परिवार बगर में, हमारो अभय नगारो रह्यो बाज।
प्रेम पिया सँग हिलमिल राची, मैंने नेक न मानी लाज ॥
कहें कबीर सुनो भाई साधो, मुझे सुख का दिया सुहाग ॥

शब्द १८

मस्तक लाग रही म्हारे, गुरु चरणन की धूर ॥ टेक ॥
जब यह धूल चढ़ी मस्तक पै, द्विविधा होगई दूर।
इड़ा पिंगला ध्यान धरत हैं, सुरती पहुंची दूर ॥१॥
यह संसार बिघन की घाटी, निकसत बिरला शूर।
प्रेम भक्त गुरु रामानन्द लाये, करी कबीर भरपूर ॥२॥

भजन १९

कोई करो मित्रता मीत, प्रीति की रीति निसाली है ॥ टेक ॥
जल ने दूधसे मेल किया था, निज गुण अपना रूप दिया था।
वो कर लिया आप समान, दुई सब दूर निकाली है ॥ १ ॥

देख अग्नि पर दूध का तपना, जलने अङ्ग जला दिया अपना।
नहीं जलने दिया यार, तप्त सब आप उठाली है ॥ २ ॥
दूध उफनकर गिरा अग्नि में, समझा यार जल गया लग्न में।
फिल जल के छींटे पाय, शोक तजि शीतलता लई है ॥ ३ ॥
यों तो सहज है दिलका लगाना, मगर कठिन है ओड़ निभाना।
टेकचन्द कर ख्याल कि वो तो, तेरा ख्याली है ॥ ४ ॥

शब्द २०

टेक—ऊधो कर्मन की गति न्यारी।
सब नदियां जल भर भर रहियां सागर किस बिधि खारी ॥
उज्ज्वल पङ्ख दिये बगुला को कोयल किस गुण कारी।
सुंदर नयन मृगा को दीने बन बन फिरत उजारी ॥
मूरख मूरख राजे कीने पंडित फिरें भिखारी।
सूर श्याम मिलिबे की आशा छिन छिन बीतत भारी ॥

राग कालिंगड़ा २१

टेक—सब दिन होत न एक समान।
इक दिन राजा हरिश्चन्द गृह संपति मेरु समान।
इक दिन जाय श्वपच गृह सेवत अंबर हरत मशान ॥

इक दिन दूलह बनत बराती चहुंदिशि दुरत निशान ।
इक दिन डेरा होत जंगल में कर सूधे पग तान ॥
इक दिन सीता रुदन करति है महा विपिन उद्यान ।
इक दिन रामचन्द्र मिल दोऊ विचरत पुष्प विमान ॥
इक दिन राजा राज युधिष्ठिर अनुचर श्रीभगवान ।
इक दिन द्रोपदी नग्न होत है चीर दुशासन तान ॥
प्रगटति है पूरब की करनी तज मन शोच अजान ।
सूरदास गुण कहँ लग वरनों विधि के अङ्क प्रमान ॥

राग प्रभाती २२

क्यों सोया गफलत का माता जाग रे नर जाग रे ।
या जागै कोई योगी भोगी या जागै कोई चोर रे ॥
या जागे कोई संत पियारा लागो राम सों डोर रे ।
ऐसी जागन जाग पियारे जैसी ध्रुव प्रहलाद रे ॥
ध्रुव को दीनी अटल पदवी दिया प्रहलाद को राज रे ।
हरि सुमिरै सोई हंस कहावै कामी क्रोधी काग रे ॥
तन का चोला भया पुराना लगा दाग पर दाग रे ।
मन है मुसाफिर तनुकी सरा बिच तू कीना अनुराग रे ॥
साधु संग सतगुरु की सेवा पावै अचल सुहाग रे ।
नितानंद भज राम गुमानी जागन पूरन भाग रे ॥

राग जंगला २३

जन्म तेरो बातां में बीत गयो, तैंने कबहूं न कृष्ण कहो।
पांच बरस का आला भोला, अब तो बीस भयो॥
मकर पचीसी माया कारण देश विदेश गयो।
तीस बरस की अब मति उपजी लोभ बढ़ै नित नयो॥
माया जोड़ी लाख करोड़ो अजहुं न तृप्त भयो।
बृद्ध भये जब आलस उपज्यो जप तप कंठ रह्यो॥
साधु की संगति कबहुं न कीनी विरथा जन्म गयो।
यह संसार मतलब का लोभी झूठा ठाट रच्यो॥
कहत कबीर समझ मन मूरख तू क्यों भूल गयो॥

शब्द २४

आऊंगा न जाऊंगा मरूंगा न जीऊंगा।
गुरु के शब्द से मैं अमीं रस पिऊँगा॥
कोई पूजे मढ़ियां कोई पूजे गौरां।
दोनों की मति हड़ लेगया चोरा॥
कोई जावे मक्का कोई जावे काशी।
दोनों के गल बीच पड़ गई फांसी॥

कोई फेरे माला कोई फेरे तसबी ।
देखोरे लोगो यह दोनों की कसबी ॥
कहे कबीर सुनो नर लोई ।
हम न किसी के हमारा न कोई ॥

राग जंगला २५

चार वर्ण में सोई बड़ा जिन राधा कृष्ण रटा रटा ।
काहेको जोड़े माल खज़ाने काहेको चुनावत ऊंची अटा अटा ॥
जब यमकी तलबी आवेगी छोड़ जाय सब लटा पटा ।
यह दम हीरा लाल अमोलक पल में जाता घटा घटा ॥
वहां आया तू कौल करार कर यहां फिरता तू नटा नटा ।
अपने कुटुम्ब को ऐसे देखै पलक उठाये पटा पटा ॥
जब हंसा चल्यो जात है छोड़ जाय तू रटा पटा ।
यह संसार मतलब का ग़रज़ी बातां करता झूठ मिठा ।
चन्द्र सखी भज बालकृष्ण छबि कानन कुण्डल मुकुट जड़ा ॥

शब्द २६

तुम देखो सन्तो भूल भुलैयां का तमाशा ॥ टेक ॥
ना कोई आता ना कोई जाता, झूठ जगतका नाता ।
ना काहू की बहन भानजी, ना काहू की माता ॥

ड्योढ़ी लग तेरी तिरिया जावे, पोली लग तेरी माता।
मरघट तक सब जायँ बराती, हंस अकेला जाता॥
एकतई ओढ़े दोताई ओढ़े, ओढ़े मलमल ख़ासा।
शाल दुशाला नितकी ओढ़े, अन्त खाक़ मिल जाता॥
कोड़ी कोड़ी माया जोड़ी, जोड़े लाख पचासा।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, संग चले ना माशा॥

शब्द २७

देश मेरा बांका है भाई जहां हंसा अमर होजाई॥ टेक॥
देश मेरे की अद्भुत् लीला वाकी थाह न पाई।
शेष महेश गणेश थके हैं शारद मति भरमाई॥
चांद सूरज अग्नि तारों की जोति जहां मुरझाई।
अर्ब खर्ब बिजली जहां चमके तिनकी छबि शरमाई॥
देश मेरे की कठिन पन्थ है तुमसे चला न जाई।
संत रूप धरके जाना हो नातर काल ले खाई॥
परधन मिट्टी के सम जानो माता नार पराई।
राग द्वेष की होली फूंको तज दो मान बड़ाई॥
सतगुरु की नित्य शरण गहोरे चरणों में चितलाई।
नाम रूप मिथ्या जग त्यागो तब वहां पहुंचो जाई॥

घाटी बिकट निकट दरवाज़ा सत्गुरु राह बताई ।
बिन सत्गुरु वाकी राह न पावे लाख करो चतुराई ॥
गुरु अपने को शीश नवाऊं आतम रूप लखाई ।
निर्भयानन्द हैं गुरू हमारे संशय दिये मिटाई ॥

शब्द २८

भज हरदम हरि भज मुख से सीताराम बोल ।
सीता राम राम बोल चाहे राधे श्याम बोल ॥
है सार जगत में नाम राम का अन्त कहूं मत डोल ।
तज कपट दम्भ पाखण्ड ध्यानधर दिलकी घुण्डी खोल ॥१॥
हैं झूठे मित्र कुटुम्ब कुधातु पर ज्यों सोने का झोल ।
तन मृतक भये सब तजैं आय घटे उठै न कौड़ी मोल ॥ २ ॥
था गर्भबास में किया भजन करने का हर से क़ौल ।
यहां आय माया में कालका बज रहा सर पर ढौल ॥ ३ ॥
सच्चा हीरा तन पाय वृथा मत पत्थर धूल टटोल ।
हरसहाय मूढ़ भज कृष्ण विषय विष मत ना पीवे घोल ॥४॥

शब्द २९

मैं चौंक पड़ी महलों में सुन मन मोहन की बँसुरी ॥ टेक ॥
ऐसो बँसुरी कान बजाई घर तज दिया सेर सजाई।
मैं ओढ़ खड़ो थी रजाई चट देसी पलँग पै पसरी ॥ १ ॥
थारी ऐसी अद्भुद् लीला सब बाजा बजैं रसीला।
मेरा तन जादू ने कीला मेरी बिन्धी पड़ी नस नसरी ॥ २ ॥
क्या छबि बरनूं मैं वाकी सब अदा निराली वाकी।
करी मोर मुकुटकी झांकी जिसमें मनी रहो थी चसरी ॥३॥
श्रीनन्द का कृष्ण कन्हैया ब्रजबासी धेनु चरैया।
कहे नेतराम दुर्गा मैया कुछ करो मेरे पै जसरी ॥ ४ ॥

शब्द ३०

टेक—केशव कही न जायका कहिये।
देखत तब रचना विचित्र हरि समझ मन ही मन रहिये ॥
शून्य भीत पर चित्र रंग नहीं बिन तन लिखा चितेरे।
धोय मिटै ना मूवे भींति दुःख पाइये यही तन हेरे ॥ १ ॥
रवि कर नीर बसे अति दारुण मक्र रूप तेहि माहिं।
बदनहीन सो ग्रसे चराचर पान करण जे जाहीं ॥ २ ॥

कोउ कहे सत्य झूठ कह कोउ युगल प्रबल कर माने ।
तुलसोदास पर हरे तीन भ्रम सो अपन पहिचाने ॥ ३ ॥

शब्द ३१

टेक—गुरु के समान नाहीं दूसरा जहान में ।
गुरु ब्रह्मरूप जानो शिव का स्वरूप जानो ।
साक्षात् विष्णु जानो लिखा है पुरान में ॥ १ ॥
गुरु ज्ञान बतावे गुरु पापसे बचावे ।
ब्रह्म से मिलावे गुरु तुर्या पद ध्यान में ॥ २ ॥
यही श्रुति वेद कहता गुरु बिन ज्ञान कैसा ।
ज्ञान बिना मुक्ति कैसी आवे तेरा ध्यान में ॥३॥
छल कपट त्याग दीजो गुरुजी की सेवा कीजो ।
सांवरा की शरना लीजो खेलो मैदान में ॥ ४ ॥

भजन ३२

टेक—अँखियां गुरु दर्शन की प्यासीं ।
देखन चाहें कमलनयन को हरदम रहत उदासी ॥ १ ॥
केशर तिलक माल मोतियन की वृन्दावन के वासी ॥ २ ॥
जो तन लागे वोही तन जाने लोगन के मुख हांसी ॥ ३ ॥

नेह लगाय त्याग दई तृण सम डाल गये गल फांसी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो लूंगो करवत काशी ॥ ५ ॥

शब्द ३३

अंखिया मोहन की बिन देखे रहा न जाय ॥ टेक ॥
जिन नैनन में श्याम बसत हैं दूजा नाहिं सुहाय ॥ १ ॥
काजर रेख किरकिरा लागे सुरमा नाहिं ठहराय ॥ २ ॥
मेरे अँगना में आयके मटकी लेत उठाय ॥ ३ ॥
और के डरते डरपत नाहीं जसुधा देख डराय ॥ ४ ॥
वंशी वाले मोहना वंशी नेक बजाय ॥ ५ ॥
तेरी वंशी ने मेरो मन हरो घर अँगना न सुहाय ॥ ६ ॥
सूरदास प्रभु तुमसे मिलन को हरसे हेत लगाय ॥ ७ ॥

शब्द ३४

गगन में अटल धुनो रही लाग ॥ टेक ॥
निरख २ मन हुआ मस्ताना भरम तिमिर गया भाग ॥ १ ॥
सप्त ऋषि जहां तप करते हैं दृढ़ आसन रहा लाग ॥ २ ॥
शून्य शिखर की सैल दिवाने करले कर वैराग ॥ ३ ॥
परमानन्द मिले गुरु पूरे जगे पूर्वले भाग ॥ ४ ॥

शब्द ३५

तेरा पिंजरा बना है अमोल निरख पिंजरे ने भाई ॥ टेक ॥
इस पिंजरे में तोता मैना ओऽहं सोऽहं बोलत बैना ।
सुरत निरत को डाट शब्द में चितलाई ॥ १ ॥
पांचो मार पचीसों वश में इन पांचो को करले रसमें ।
शून्य शिखर को खोज भरम तेरा मिटजाई ॥ २ ॥
खम्ब गड़े हैं बड़े रसीले बन्ध मत समझे इनको ढीले ।
लगा पवन की गांठ खम्ब में उलझाई ॥ ३ ॥
जो सतगुरु की शरना आवे मङ्गल भूल परमपद पावे ।
हो तुर्या असवार मिटे आवा जाई ॥

दोहा—तू ही मात तू ही तात है, तू ही बन्धु सुत नार ।
तू ही आदि तू ही अन्त है, तू ही गुरू दातार ॥

शब्द ३६

तेरा यह खेल अपारा है जित देखूं तू ही तू है ॥ टेक ॥
तू ही वन में तू ही घर मंदिर में कूप बावड़ी तू ही ।
सरवर में तू ही सब का करतार भरम से न्यारा है ॥ १ ॥
इन्द्रियों में देखा तू ही मन है शुद्धकरण में तू ही पवन है ।
वरुणों में तू ही वरुण जलों में गंगा धारा है ॥ २ ॥

ज्ञानी में ब्रह्मज्ञान तू ही है योगी का सुख ध्यान तू ही है।
सबका जीवन प्राण तू ही आधारा है ॥ ३ ॥
फूल पात फल डाल तू ही है कालोंका महाकाल तू ही है।
परमानन्द प्रकाश शब्द औंकारा है ॥ ४ ॥

शब्द ३७

टेक—जगत् में हरि सम मित्र न कोई।
भांति २ के देत पदारथ कृपा नीर से धोई ॥ १ ॥
जो नर हरि सों करे मित्रता आप हरि सम होई ॥ २ ॥
हरि सुमिरण सत्संग जगत् में सार पदारथ दोई ॥ ३ ॥
भजो कन्हैयालाल हरि को वृथा जन्म मत खोई ॥ ४ ॥

शब्द ३८

कोई पहुंचे सन्त विवेकी उस मग की राह कठिन है ॥ टेक ॥
विना पन्थ बिन पग का मारग कोई पहुंचो विरला जन है ॥ १ ॥
शून्य शिखर पर चढ़ कर देखा जहां बिना नयन दर्शन है ॥ २ ॥
बिना धरण जहां आसन मारो बिना देह इक जन है ॥ ३ ॥
मगन भई जब पिय को पायो उस पोव पर मेरा मन है ॥ ४ ॥
मंगलानन्द मगन सुखराशी सत्-चित्-आनन्द घन है ॥ ५ ॥

शब्द ३९

टेक—चले गये दिल के दामनगीर।

जब सुध आवे तुम्हरे दर्श की उठे कलेजे पीर ॥ १ ॥
नटवर भेष नयन रतनारे सुन्दर श्याम शरीर ॥ २ ॥
वृन्दावन बंसीवट त्यागो निर्मल यमुना नीर ॥ ३ ॥
आप ही जाय द्वारका छाये खारो नद के तीर ॥ ४ ॥
सब गोपियन को नेह विसारो ऐसे भये बेपीर ॥ ५ ॥
सूरदास ललिता उठ बोली आखिर जाति अहीर ॥ ६ ॥

शब्द ४०

टेक—सोवै है नगरिया सारी जागूंरी भनेली मैं।

चेतन चिराग प्यारी चांदना हवेली में।
बगड़ में अँधेरी छाई डरूं हूं अकेली में ॥ १ ॥
खिड़की सारी बन्द करके सोचती अकेलीमें।
पिया २ रटने लागी नार थी नुहेली में ॥ २ ॥
इतने में एक सोऽहं २ शब्द हुआ हेली में।
श्यामसुन्दर मन्दिर के अन्दर टेर खड़े देली में ॥ ३ ॥
शून्य अटा पर सेज सजन की वहां पकड़ले लई में।
टीकम कहे परम सुख पाई पीछे चौसर खेली में ॥ ४ ॥

शब्द ४१

टेक—वा घर जय्यो हे नींद जा घर राम नाम नहीं भावे ।
बैठ सभा में मिथ्या बोले निन्दा करे पराई ।
वह घर हमने तुझे बताया जय्यो बिना बुलाई ॥ १ ॥
कैतू जय्यो राज दुवारे कै रसिया रस भोगी ।
हमरा पीछा छोड़ बावरी हम हैं रमते जोगी ॥ २ ॥
ऊंचा मन्दिर धौर सखीरी जहां कामिन चँवर डुलावे ।
हमरे संग क्या लेगी बावरी पत्थर पर दुःख पावे ॥ ३ ॥
कहे भरथरी सुनरी निद्रा यहां नहीं तेरा बासा ।
हम तो रहते राम भरोसे गुरू मिलनकी आशा ॥ ४ ॥

शब्द ४२

टेक—सतगुरुजी मोपै राम रँग डारा ।
शब्द की चोट लगी तन माहीं बींध लिया तन सारा ॥१॥
जड़ी न बूटी कछु नहीं लागे क्या करे वेद विचारा ॥ २ ॥
सुरजन मुनि जन पीर औलिया सब ही पच २ हारा ॥ ३ ॥
कहत कबीर सर्व रँगरँगिया सब रँगनसे राम रँग प्यारा ॥४॥

शब्द ४३

टेक— सतगुरु थारीजी अटारी चढ़ के मगन हुई।
जी गगन मण्डल मेरा पिया में लपट के झपट रही।
सो सुख मोपैं वरणों न जाई मेरे तन की तपन बुझी ॥ १ ॥
राग छतीसों होय स्वयंगम अनहद धुन होय रही।
कोटि भानु उजियारा देखो उलट अमी छई ॥ २ ॥
ऋषि मुनि जाको ध्यान धरत मेरे सतगुरु सैन दई।
अष्ट पहर गुरु सूरत निरखूं लागी लगन नई ॥ ३ ॥
बाहर भीतर लखा प्रेम गुरु देखा सर्व वही।
कहत कबीर सुनो भाई साधो जीवन मुक्त लई ॥ ४ ॥

शब्द ४४

संतन हितकारी जी गुरु देव हमारा।
दीनन का बेली म्हारा सांवरा ॥ टेक ॥
पलकन पंथ बुहारूं तुम्हारो नयन पै पग धारो।
घना दिना की पंथ निहारूं हृदा माहिं पधारो ॥ १ ॥
रात दिवस मोहि नींद न आवे हरदम विरह सतावे।
वह दिन कोनसा होयगा स्वामी दर्श दास थाकों पावे ॥२॥

जी पाप भरी म्हारी देह है स्वामी पाप हमारा काम ।
हमरी ओर निहारो स्वामी तुमहीं सँवारो काम ॥ ३ ॥
अलख अनीह अनाद अभेदा नाम तुम्हारा बेनाम ।
क्योंकर कर मैं जानूं तुमको तुम ही पठावो निज धाम ॥४॥
तुम सतगुरु प्रभु सिंह हो और कौन करे थारी होड़ ।
हमरी ओर निहारी स्वामी आओ हमारी ओर ॥ ५ ॥
जी गुरु देव हमारा हांहां भला मेरे प्राणप्यारे ।
दीनन के आवो प्यारा पावना संतन हितकारो ॥ ६ ॥

शब्द ४५

मैं तेरा स्वामी मुझे न दिल से भूल ॥ टेक ॥
तुही डार में तुही पात में तुही रँगीला फूल ॥ १ ॥
गोपीचन्द भरथरी राजा सिर में डाली धूल ॥ २ ॥
दास कबीर शरण तेरो आया होवे अर्ज कबूल ॥ ३ ॥

शब्द ४६

दिवाने प्यारे क्या गावे घर दूर ॥ टेक ॥
अनलहक कह हक़ को पहुंचा सूली चढ़ मंसूर ॥ १ ॥
शेख़ फ़रीद कूए में लटका गिरे तो चकनाचूर ॥ २ ॥

स्याही गई सफेदी आई चलना है बड़ी दूर ॥ ३ ॥
बलखबुखारे के बादशाह ने नौसो छोड़ीं हूर ॥ ४ ॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो हरदम हाजिर हजूर ॥ ५ ॥

शब्द ४७

टेक—गुरु ने मेरे बाण मारा ।

ना मारी मेरे छुरी कटारी, शब्दोंका मारा न्यारा न्यारा ॥ १ ॥
औषधि मूल मंत्र नहीं लागे, क्या करे वैद्य विचारा । । २ ॥
कच्चा कोट पक्का दरवाजा, घायल आन पुकारा ॥ ३ ॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, लेलो नाम सहारा ॥ ४ ॥

शब्द ४८

टेक—राम ज्यूं राखे त्यूं रहिये ।

जो प्रभु करे भला कर माने, मुखते बुरा न कहिये ॥ १ ॥
हर होनी अनहोनी भी करदे, सो सब सिर पर सहिये ॥ २ ॥
कर कृपा निज नाम जपावे, सो अन्तर ले गहिये ॥ ३ ॥
महरदास हरि आज्ञा माने, यह सेवक को चहिये ॥ ४ ॥

भजन ४९

टेक—मोको कहां ढूंढेरे बन्दे, मैं तो तेरे पास में।
ना तीरथ में ना मूरत में, ना एकान्त निवास में।
ना मन्दिर में ना मस्जिद में, ना काशी कैलाश में ॥१॥
ना मैं जप में ना मैं तप में, ना मैं व्रत उपवास में।
ना मैं क्रिया करम में रहता, ना मैं योग संन्यास में ॥ २ ॥
नहीं प्राण में नहीं पिण्ड में, ना ब्रह्माण्ड अकाश में।
ना मैं त्रिकुटि भंवर गुफा में, सब श्वासनकी श्वास में ॥३॥
खोजी होय तुरत मिल जाऊं, एक पल ही की तलाश में।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, मैं तो हूं विश्वास में ॥ ४ ॥

भजन ५०

हरि हरि जप लेनी अवसर बीतो जाय ॥ टेक ॥
जो गये सो फिर नहीं आवें, कर विचार मनलाय ॥ १ ॥
यह जग बाजी सांच न जानो, तामें मत भरमाय ॥ २ ॥
कोई किसी का है नहीं बोरे, नाहक़ लिये लगाय ॥ ३ ॥
अन्त समय कोई काम न आवे, जब यम दे बौराय ॥ ४ ॥
चरणदास कहे सहजो बाई, सत्सङ्गत शरणाय ॥ ५ ॥

भजन ५१

नैनो लिख लेनी साईं तेरे हजूर ॥ टेक ॥
आगे पीछे दहने बांये, सकल रहा भर पूर ॥ १ ॥
जिनको ज्ञान गुरू का नाहीं, सो जानत हैं दूर ॥ २ ॥
योग यज्ञ तीरथ व्रत साधें, पावत नाहीं कूर ॥ ३ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जिसी में, सोई हरका नूर ॥ ४ ॥
चरणदास गुरु मोय बतायो, सो है सबका मूर ॥५॥

भजन ५२

कान्हा वंसी वारे मोरी गली आजारे ॥ टेक ॥
कोरी कोरी मटकन दही जमायो, मेरो ही माखन खाजारे ॥१॥
वृन्दावन की कुञ्ज गलिन में, झुक मुखड़ा दिखाजारे ॥ २ ॥
मैं तिहारे पर हुई हूं बावरी, तन की तपन बुझाजारे ॥ ३ ॥
चरणदास कहे सुखदेव पियारे, नैनों से नैन मिलाजारे ॥४॥

ठुमरी ५३

वंशीवारे उठाना मेरी मटकी ॥ टेक ॥
संग की सहेली जलभर सटकी वंसी की धुन सुन मैं ही रही ॥
अटकी ॥ १ ॥ दौरानी जिठानी से रहे मेरी खटकी, देंगी सब

तना एती वार कहां अटकी ॥ २ ॥ मटकी उठाऊं नहीं जानूं तेरे घटकी, संग ले जाय शोभा सारे पनघटकी ॥३॥ शंभु सखी की नाव परी अटकी, जो जानत हो घटकी तो लाज राखो घूंघट की ॥ ४ ॥

शब्द ५४

अब ना रहूंगी राम अटकी, म्हारी लगी जो राम से प्रीति ॥टेक॥

मन्दिर जा चरणामृत लेसी, कपटी लोगों ने अटकी ।
ठाकुरजी आगे नृत्य करूं थी, ताल बजाऊं और चुटकी ॥१॥
राजनीति की सार की न जानी, साधांरे संग अटकी ।
देवर जेठ की कान न मानी, पड़ो घूंघट पर पटकी ॥ २ ॥
गहना गूंठी कभी न पहरूं, गल तुलसी की कण्ठी ।
नोसर हार गले रो त्यागो, भूकी नागरलट की ॥ ३ ॥
म्हाने सतगुरु ऐसो मिल गयो. लागी ज्ञान की गुटकी ।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, आवागमन से छुटकी ॥ ४ ॥

शब्द ५५

जो कोई चितसे मोह न बिसारे, मैं न बिसारूं प्रणहै यही मेरा॥टेक॥

धर्म प्रिय हो धर्म बढ़ाऊं, सफल कार्य कर अर्थ बताऊं ।
मुक्ति चाहे तो पार लगाऊं, पल क्षण मांहि ना लागत बेरा ॥१॥

रोग हरूं चिन्ता सब टारूं, अभय करूं शत्रु को मारूं ।
अचल भक्त जन वेग उबारूं, सेवा करूँ आप बन चेरा ॥२॥
मेरा नाम भक्त सुखदायक, सदा विपति में होत सहायक ।
जो कोई रटे कृष्ण यदुनायक, ताके हृदय करत नित डेरा ॥३॥

ग़ज़ल ५६

अरे लोगो तुम्हें क्या है, या वह जाने या मैं जानूं ॥ टेक ॥
वह दिल मांगे तो हाज़िर है, वह सर मांगे तो बेसर हूं ।
जो मुख मोड़ूं तो काफिर हूं, या वह जाने या मैं जानूं ॥१॥
वह मेरी बग़ल छुप रहता, मैं उसके नाज सभी सहता ।
वह दो बातें मुझे कहता, या वह जाने या मैं जानूं ॥ २ ॥
वह मेरे खून का प्यासा, मैं उसके दर्द का मारा ।
दोनों का पंथ है न्यारा, या वह जाने या मैं जानूं ॥ ३ ॥

ग़ज़ल ५७

टेक—बने जो कुछ धर्म करले, यही एक साथ जावेगा ।
गया अवसर न तेरे फिर, यह हरगिज़ हाथ आवेगा ॥
दिवाना बनके दुनिया में, समय अनमोल खोता है ।
दिये लाखों की दौलत भी, न पल रहने तू पावेगा ॥ १ ॥

धरी रह जायगी तेरी, अकड़ सारी ठिकाने पर।
जब आके यम जकड़ गरदन, पकड़कर धर दबावेगा ॥२॥
कुटुम्ब परिवार सुत जोई, सहायक होगा न कोई।
तेरे पापों की गठरी खुद, तू ही सिर पर उठावेगा ॥ ३ ॥
गर्भ में था कहा तूने, न भूलूगां प्रभू तुझ को।
भला तू जाय के अपना, उसे क्या मुंह दिखावेगा ॥ ४ ॥
तुझे तो घर से जंगल में, तेरा ही खुद बखुद बेटा।
सुलाकर लकड़ियों के ढेर, पर तुझ को जलावेगा ॥ ५ ॥
कहे कबीर समझाई, तू कहना मानले भाई।
नहीं तो अपनी ठकुराई, वृथा सारी गँवावेगा ॥ ६ ॥

भजन ५८

टेक—बन आयेकी बातरे ऊधो, बन आयेकी बातरे।
एक समय हर हमने देखे, मुख धोवत ना हाथ रे।
अब तो कृष्ण भये ब्रह्मचारी, सौ सौ बिरियां न्हात रे ॥१॥
एक समय हर हमने देखे, छीन छीन दधि खात रे।
अब तो कृष्ण भये हैं राजा, चढ़े सिंहासन जात रे ॥ २ ॥
कर पै पात पात कर ही पै, मांग २ दधि खात रे।
जो माधो इस बन नहिं आवें, तुम क्यों आवत जातरे ॥३॥

यही बात उनसे जा कहियो, और बातों की बात रे।
यह बात उनही को सोहै. जाके दो जननी दो तात रे ॥४॥
ज्यूं मद कुल बसे काष्ट में, बंधा अम्बुज के पात रे।
जो गङ्गा देवन को दुर्लभ, जामें श्वान नहात रे ॥ ५ ॥
तेल के सङ्ग फुलेल होत है, महकत बास सुबास रे।
मोती बीच सूत का तागा, महँगे मोल बिकात रे ॥ ६ ॥
वृन्दावन में गऊ चरावत, गोकुल ही को जात रे।
हाथ लकुटिया कांधे कमरिया, रज लिपटाये गात रे ॥७॥
यही वृन्दावन यही वन कुञ्जन, यही पलाश के पात रे।
हाथ ओट हरि हमसे खाया, दधि माखन और भातरे ॥८॥
यो मन माधोजी से झगड़ूं, दे कुब्जा के लात रे।
सूर श्याम कुबजा संग बिरमें, गोपिन संग लजात रे ॥९॥

रसिया ५९

टेक—बतादे कान्ह मोय कैसे आयो मेरी बाखर में।
मैं तो अपने चौबारे में, रहो पलङ्ग पर सोय।
बांह पकड़ तैंने आन जगाई, तेरी अक्ल गई कहां खोय ॥१॥
भज जा कान्हा घर अपने को, मैं समझाऊं तोय।
जो मेरा बलमा जाग पड़ेगा, खूब लड़ाई होय ॥ २ ॥

बड़े घरन को राजदुलारी, क्या समझे है मोय।
तेरी जात अहीरा कान्हा, जानत हैं सब कोय ॥ ३ ॥
यह बातें मथुरा में कान्हा, देऊं कंस से पोय।
भरी कचेहरी पकड़ मँगावे, तेरी माय मरेगी रोय ॥४॥

भजन ६०

टेक—मिलना कठिन है, कैसे मिलूं पिया संग जाय।
समझ सोच पग धरूं यतन से, कर बहु भांति उपाय।
ऊंची सैल गैल रपटीली, पांव नहीं ठहराय ॥ १ ॥
लोक अरु कुलकी मर्यादा से, बहुतक मन सकुचाय।
धाय मिलूं पियसे पीहर में, तो अनरीत दिखाय ॥२॥
शून्य शिखर पर पिय को महल है, श्वेत ध्वजा फहराय।
शब्द स्वरूपी पिया बसत है, वहां सुरत झकोरा खाय ॥३॥
दूती सुमति आय धर्मिन को, दीनों पिय ही मिलाय।
पिय ने पकर प्रेम से बैयां, लीनी कण्ठ लगाय ॥४॥

ग़ज़ल ६१

आ मौत जान मेरी, आफत में मुबतला है।
झगड़े बपा हैं हरसू, सिर पर खड़ी बला है ॥ १ ॥

आरामे जान जाना, राहत दिलो जिगर की।
ज़ख़्मों की तू है मरहम, दारू है दर्दे सर की ॥ २ ॥
तुझ से निजात मिलती, है रंज से अलम से।
तू देती है रिहाई, दुःख दर्द और ग़म से ॥ ३ ॥
आबिद फ़क़ीर वो ज़ाहिद, हरएक है तेरा शदा।
ख्वाहिश है सब को तेरी, सब में है तेरी चर्चा ॥ ४ ॥
आरहम कर खुदारा, परदा ज़रा उठादे।
जिसकी हवस है सूरत, उसकी मुझे दिखादे ॥ ५ ॥
ऐ मौत जल्दी आजा, दे हमको ज़िन्दगानी।
तेरे तुफैल पायें, हम ऐशो काम रानी ॥ ६ ॥
आशा इशे दो गीती, ऐ मौत नाम तेरा।
दुख दर्द से बचाना, है मौत काम तेरा ॥ ७ ॥
मादर की तरह शफक़त, है गोद में उठाले।
मँझधार में पड़े हैं, गिरदाब से बचाले ॥ ८ ॥

शब्द ६२

टेक—मुकुट लटक अटकी मन माहीं।
नृत्य नटवर मदन मनोहर, कुंडल झलक अलक बिथुराहीं ॥ १ ॥
नाक बुलाक हलत मुकताहल, होठ मटक गत भौंह चलाई ॥ २ ॥

झुनक २ पग धरत धरनि पर, बांह उठाय करत चतुराई ॥३॥
झुनक २ नूपुर झनकरत, तातायेई तातायेई रिझत रिझाई ॥४॥
चरणदास सहजो हिय अन्तर, भवन करो जित रहो सदाई ॥५॥

ग़ज़ल ६३

हमें नहीं काम दुनिया से, हमें श्रीकृष्ण प्यारा है।
यशोदा नन्द का ढोटा, मेरे नयनों का तारा है ॥ १ ॥
तेरी वह सांवरी सूरत, मेरे हृदय में वह मूरत।
उसी का ध्यान धरते हैं, उसी पर प्राण वारा है ॥ २ ॥
उठाया आप गिरवर को, इन्द्र का मान मारा है।
गये जब आप मथुरा को, पकड़ कर कंस मारा है ॥ ३ ॥
चलो बैकुण्ठ को चलिये, जहां गंगा की धारा है।
सुनो बिन्ती प्रभू मेरी, सदा सेवा करूं तेरी।
मिलोना आप खुश दिल से, हमें तेरा सहारा है ॥

भजन ६४

प्रभुजी भले बुरे हम तेरे ॥ टेक ॥
पेट भरे पर महा आलसी, सोवत सांझ सवेरे ॥ १ ॥
तुम समदर्शी अधम उधारन, चित्त न धरो अवगुण मेरे ॥२॥
काम क्रोध अरु ममता तृष्णा, रहत सदा नित घेरे ॥ ३ ॥

तुम बिन कौन सहायक मेरो, बैरी बहुत घनरे ॥ ४ ॥
माया बस ये जन्म गँवाया भटक बहुतेरे ॥ ५ ॥
गोपीनाथ आस तज सब की, होउ श्याम के चेरे ॥ ६ ॥

भजन ६५

प्रभु तेरी माया लखी न जाय ॥ टेक ॥
सुर नर मुनि कोउ जान न पायो, विधि हरि शम्भु नचाय।
रूप रेख वाके नहीं कोई, ऐसो वेद बताय ॥
सो प्रभु निज जन कारण तारन, नाना रूप धराय ॥ १ ॥
छिन में राव रङ्क कर डारे, रङ्कहिं राव बनाय।
अकरण करण करण को अकरण, करत न देर लगाय ॥२॥
पंथ अनेक वाणी बहुतेरी, कहां २ चित्त फँसाय।
तेरी माया में सब मोहे, न्यारे भेद जनाय ॥ ३ ॥
सबका सार सकल की सम्मति, यह निश्चय जिय आय।
माधव प्रभु को नाम सुमिरले, प्रेम सहित हर्षाय ॥ ४ ॥

ग़ज़ल ६६

श्याम की ऊधो छबी दिलमें हमारे भा रही ॥ टेक ॥
मुकुट सिर पर कान में कुण्डल गले बनमाल है।
मुख में लगाई बांसुरी अब याद हमको आरही ॥ १ ॥

छोड़ कर हमको मुरारी वास मथुरा में किया।
एक २ घड़ी हमें अब प्यारे बरस २ बितारहो ॥ २ ॥
फिर कभी आवेंगे गोकुल में दया करके हरि।
अँखियां हमारी रात दिन दरशन लिये तरसा रही ॥ ३ ॥
यह ज्ञान का उपदेश ऊधो और को बतलाइये।
ब्रह्मानन्द माधव की हमें अब प्रेम भक्ति सुहारही ॥ ४ ॥

ग़ज़ल ६७

सुमति कहती है मन सेती, तेरे में काम आऊंगी।
कुमति से दोस्ती मतकर, तेरा यश जग में गाऊंगी ॥ १ ॥
पांचों नारियां तेरी, सदा दासी करूं चेरी।
ज़रा टुक बात सुन मेरी, अमरपुर ले बसाऊंगी ॥ २ ॥
मोहब्बत मुझ से टुक लारे, करे क्या सोच अब प्यारे।
बहिश्ते हूरकी परियां, तेरे आगे नचाऊंगी ॥ ३ ॥
अलि हुसैन अवगत की, क़सम मुझ को तेरे हितकी।
दिलासा नन्द के सुतकी, तुझे कान्हा बनाऊंगी ॥ ४ ॥

रसिया ६८

मेरे अँगना में बांसुरी बजाय जा, खिलौना तू ने ले दूंगी ॥टेक॥
मेरे अँगना में चौक बहुतेरो, दूर खेलन मत जाय ।
अगर पड़ोसन सब ही दुखिया, नत काहूके लाला जाय ॥१॥
जो लाला तू दधि को भूखो, भैंस बंधा दूं दोय ।
घर घर से मैं माखन लाके, तोह तो जिमा दूंगी ॥ २ ॥
चन्द्र सखी मोहन को मिलवो, मिले न बारम्बार ।
यो मोहन अलगोजा वारो, लेगया भजन बनाय ॥ ३ ॥

शब्द ६९

बांस चढ़ी हरषानी नटनियां ॥ टेक ॥
शब्द वास धुनि डोर पकड़कर,
गगनमें चढ़ मगनानी नटनियां ॥ १ ॥
बाजे अनहद ऊपर बाजैं,
चढ़ गई अधर ठिकाने नटनियां ॥ २ ॥
सत्यलोक में जाय डङ्का दीना,
गुरु को करत सलामी नटनियां ॥ ३ ॥
पद्मदास फिर उलटी चढ़,
चरण गुरू के लपटानी नटनियां ॥ ४ ॥

भजन ७०

बतादे सखी कौन गली गये श्याम ॥ टेक ॥
गोकुल ढूंढ़ बृन्दावन ढूंढ़ा, मथुरा में होगई शाम ॥ १ ॥
मथुरा ढूंढ़त रैन बिहानी, रात कियो विश्राम ।
भोर भयो जब बन २ ढूंढ़ा, पायो कदमन छांह ॥ २ ॥
कहा कहुं बाके मुखकी शोभा, कोटि उदय भये भानु ।
चन्द्र सखी भज बालकृष्ण छबि, लजत कोटि शत काम ॥३॥

शब्द ७१

बम बम्भोले नाथ शिव नाथन के नाथ,
आज मेरी कामना पूरण करो ।
मेरे बाबे की झोली में क्या २ चीज़,
लौंग सुपारी धतूरा का बीज ॥ १ ॥
कोई बजावे शङ्ख घडावल, कोई बजावे ताल,
कोई मांगे खड़ा होकर गोदी में का लाल ॥ २ ॥
कोई चढ़ावे बेल पत्र, कोई चढ़ावे भङ्ग ।
बैल को सवारी कीन्ही पारवती के सङ्ग ॥ ३ ॥

भजन ७२

सुमति सुहागिन जाग सवेरे, सत्गुरु तोहे बुलावेरी ॥ टेक ॥
देह नगर के दरवाजे, खिड़की कपट खुलावेरी ।
श्रुति मारजुनी लेकर, गृह छाड़ अज्ञान दुरावेरी ॥ १ ॥
त्रिवेणी सङ्गम कर मज्जन, बुद्धि बशान पहिरावेरी ।
कर शृङ्गार सप्त नव सुन्दर, शील बिन्दुका लावेरी ॥ २ ॥
नथ सन्तोष क्षमा कर कुण्डल, धीरज मांग भरावेरी ।
दया धर्म दान माल उर, समता अञ्जन लावेरी ॥ ३ ॥
प्रेम पदारथ साज चतुर्विधि, चितकर थाल भरावेरी ।
मनअनुराग भक्ति रस भीजी, सत्गुरु सम्मुख जावेरी ॥ ४ ॥

भजन ७३

अनुभवस्वरूप निजरूप लखा जिन, ओ३म्सोऽहं रटा २ रे॥ टेक॥
अक्षय धन सम्पति मिल जावे, तृष्णा कबहूं मन न डुलावे ।
कर सन्तोष बैठ रहो घर में, बाहर फिर मत उठा २ रे ॥१॥
शान्त चित्त निर्मल बुद्धि होवे, वृथा कल्पना मन की खोवे ।
अन्तर बाहर उज्ज्वल करले, मल बाधा को छुटा २ रे ॥ २॥

राग द्वेषके फंद कट जावें, चहुं दिशि समता भाव दर्शावें।
निश्चय यहीं एक मन राखे, जगसों दृष्टि हटा २ रे ॥ ३ ॥
नाम रूप गुण लखे न जावें, सत्चित् आनन्द भ्रम नशावें।
माखन माखन खालो प्यारे, छोड़ दो ये मठा मठारे ॥ ४ ॥

भजन ७४

झूंठी २ है काया पतङ्गो रँग लाया ॥ टेक ॥
झूंठी काया झूंठी माया, झूंठा जग भरमाया।
झूंठ झूंठ के कारणे तैंने, वृथा जन्म गँवाया ॥ १ ॥
भाई भतीजों ने भात परोसे, दें साधों ने रूखी।
आयके यम तेरा दर्प घोंटेंगे, लगें रांड के जूती ॥ २ ॥
सन्ता सेती भड़ २ बोले, रहे राम संग रूसी।
चार जने तैंने लेके चालें, जा जङ्गल में फूंकी ॥ ३ ॥
समझाय रहा तैंने एक न मानो, तेरी अँखिया फूटी।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, जड़ी लगे ना बूटी ॥ ४ ॥

शब्द ७५

टेक—कोई पीवो राम रस प्यासारे।
गगन मण्डल मैं अमृत बरषै, पीलो सांसम सांसा रे ॥ १ ॥

ऐसा महँगा अमी बिकत है, छै रत्ती बारह मासा रे।
जो पीवे सो जुग जुग जीवे, कबहुं न होत विनाशा रे॥ २॥
इस रस कारण हुए नृप जोगी, छोड़े भोग विलासा रे।
सहज सिंहासन बैठे रहतें, भस्म लगाय उदासा रे॥ ३॥
गोपीचन्द भरथरी रसिया, अरु कबीर रैहदासा रे।
गुरु दादूप्रसाद को चुनके, पाया सुन्दर दासा रे॥ ४॥

भजन ७६

भजन बिन बावरे, तैने हीरा सा जन्म गंवाया॥ टेक॥
कभी न आया सन्तें शरणा, ना तैं हरि गुण गाया।
बह २ मरा बैल की नाईं, सोय रहा उठ खाया॥ १॥
ये संसार हाट बनिये की, सब जग सौदा आया।
चातुर माल चौगुणा कीना, मूरख मूल ठगाया॥ २॥
ये संसार फूल संभल का, शोभा देख लुभाया।
मारी चोंच रुई निकसाई, मूड़ी धुन पछताया॥ ३॥
ये संसार माया का लोभी, ममता महल चिनाया।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, हाथ कछू ना आया॥ ४॥

गोविन्दाष्टक ७७

सत्यं ज्ञान मनन्तं नित्य, मनाकाशं परमाकाशं।
गोष्ठ प्राङ्गण रिङ्गण लोल, मनायासं परमायासम्॥
माया कल्पित नानाकार, मनाकारं भुवनाकारम्।
क्षमामा नाथ मवार्थं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम्॥१॥

मृत्सा मत्सी हेति यशोदा, ताडन शैशव संत्रासं।
व्यादित् वक्त्रा लोकित लोका, लोक चतुर्दश लोकालिम्॥
लोक त्रयपुर मूलस्तम्भं, लोका लोक मना लोकं।
लोकेशं परमेशं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दं॥२॥

त्रैविष्टपरिपु बीरघ्नं, क्षति भारघ्नं भव रोगघ्नं।
कैवल्यं नवनीता हार, मनाहारं भुवनाहारं॥
वैमल्य स्फुट चेतो वृत्ति, विशेषा भास मना भासं।
शैवं केवल शान्तं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम्॥३॥

गोपालं प्रभु लीला विग्रह, गोपाल कुल गोपालं।
गोपी खेलन गोवर्द्धन धृति, लीला लालित गोपालम्॥
गोभिर्नि गदित गोविन्द, स्फुट नामानं बहु नामानं।
गोधी गोचरं दूरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम्॥४॥

गोपी मन्डल गोष्ठी भेदं, भेदावस्थं भेदाभं ।
शश्वद् गोखुर निर्धूतो, धृत धूली धूसर सौभाग्यं ॥
श्रद्धा भक्ति गृहीत्वा नन्दं, चिन्त्यं चिन्तित सद्भावं ।
चिन्तामणि मणि मानं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥५॥
स्नान व्याकुल योषिद् वस्त्र, मुपादायाग् मुपारूढं ।
व्यादित संतीरस्थ दिग् वस्त्रा, वस्त्र मुपा कर्षन्तता ॥
निर्धूत द्वय शोक बिमोहं, बुद्धं बुद्धे रन्तस्थं ।
सत्तामात्रं शरीरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ६ ॥
कान्तं कारण कारण मादि, मनादिं काल घना भासं ।
कालिन्दि गत कालिय शिरसि, नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यतं ॥
कालं काल कलातीतं, कलिता शेषं कलि दोषघ्नं ।
कालत्रय गति हेतु प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ७ ॥
वृन्दावन भुवि वृन्दारकगण, वृन्दा राधित वन्द्येहं ।
कुन्दा भामल मन्दस्मेर, सुधानन्द सुहृदानन्दम् ॥
वन्द्या शेष महा मुनि मानस, वन्द्यानन्द पद द्वन्द्वं ।
वन्द्या शेष गुणाब्धिं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥
गोविन्दाष्टक मेतद्धीते, गोविन्दार्पित संचेता ।
गोविन्दांघ्रि सरोज ध्यान, सुधा जल धौत समस्ताघः ॥

गोविन्दा च्युत माधव विष्णो, गोकुल नायक कृष्णेति।
नित्यं गायन यास्यति भक्तो, गोविन्दे परमानन्दम् ॥ ६ ॥

छन्द ७८

नमामि भक्त वत्सलं, कृपालु शील कोमलं।
भजामि ते पदांबुजं, अकामनां स्वधामदम् ॥
निकाम श्यामसुन्दरं, भवाम्बुनाथ मन्दिरं।
प्रफुल्ल कंज लोचनं, मदादि दोष मोचनं ॥ १ ॥
प्रलम्ब बाहु विक्रमं, प्रभो प्रमेय वैभवं।
निषंग चाप सायकं, धरं त्रिलोक नायकम् ॥
दिनेश वंश मन्डनं, महेश चाप खन्डनं।
मुनीन्द्र संत रंजनं, सुरारि वृन्द भंजनम् ॥ २ ॥
मनोज वैरि वन्दितं, अजादि देव सेवितं।
विशुद्ध बोध विग्रहं, समस्त दूषणा पहम् ॥
नमामि इन्दरापतिं, सुखाकरं सतां गतिं।
भजे सशक्ति सानुजं, शची पति प्रियानुजम् ॥ ३ ॥
त्वदंघ्रि मूल ये नरा, भजन्ति हीन मत्सराः।
पतन्ति नो भवार्णवे, वितर्क वीचि संकुले ॥

विविक्त वासिनः सदा, भजन्ति मुक्तये मुदा ।
निरस्य इन्द्रियादिकं, प्रयान्ति ते गतिं स्वकम् ॥ ४ ॥
त्वमेक मद्भुतं प्रभु, निरीह मीश्वरं विभुं ।
जगद्गुरुं च शाश्वतं, तुरीय मेव केवलं ॥
भजामि भाव वल्लभं, कुयोगिनां सुदुर्लभं ।
स्वभक्त कल्प पादपं, समस्त सेव्य मन्वहम् ॥ ५ ॥
अनूप रूप भूपतिं न तोऽहं सुर्विजा पतिं ।
प्रसीद मे नमामि ते, पदाब्ज भक्ति देहि मे ॥
पठन्ति येस्तवं इदं, नरादरेण ते पदं ।
व्रजन्ति नात्र संशय स्त्वदीय भाव संयुतम् ॥ ६ ॥

भगवद्भक्ति आश्रम,

रामपुरा।

~o~

यह आश्रम रेवाड़ी जंकशन से पश्चिम दिशा में लगभग एक कोस के अन्तर पर जङ्गल में अति पवित्र भूमि में बना है। जल की सुविधा के लिये एक कूप है दूसरा तालाब "रामसर" तीर्थरूप है जो अभी खोदा जारहा है, इसमें पक्के घाट बनाये जाने का आयोजन होरहा है। तालाबके आसपास कई बीघों में उपयोगी वृक्ष लगे हैं। लगभग ५०० बीघे भूमि आश्रम से लगी हुई गौओं के चरने के लिये श्री लेफ्टि-नेण्ट राव बलवीरसिंहजी ने आश्रम के लिये प्रदान की है जिसमें गौ, मृगादि स्वछन्द चरते हैं। इस वन में शिकार नहीं खेला जाता।

इस समय आश्रम में एक ब्रह्मचर्य्याश्रम २ साधारण पाठ-शाला ३ कन्या पाठशाला ४ अछूत पाठशाला और अतिथियों व सत्सङ्गियों के ठैरने का स्थान व एक पुस्तकालय है।

उद्देश ।

१—श्रीभगवान की भक्ति का प्रचार करना ।

२—गौरक्षण और उसके लिये गौचर भूमि छुड़वाना ।

३—जङ्गलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना ।

४—शिक्षा का प्रचार करना (जिसमें मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सकें) और प्राचीन प्रथा का फिर प्रचलित करना ।

५—बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना ।

६—आसपास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटाकर शान्ति और प्रेम बढ़ाना ।

७—सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म्म का भाव जाग्रति करना ।

८—राजा और प्रजा सब ही का हित-चिन्तन करना ।

यह आश्रम नियमानुसार एक कमेटी की संरक्षता में है । आश्रम से सत्य शब्द संग्रह और सार संग्रह पुस्तक महसूल डाक के ⌒) के टिकट भेजने पर मुफ्त भेजी जाती हैं ।

नोट—आश्रम से "ज्ञान, योग भक्ति मार्ग" नाम का एक मासिक पत्र हिन्दी भाषा में प्रकाशित करने का विचार है। यदि भक्ति जन प्रयत्न करके ५०० ग्राहकों के नाम भेज दें तो पत्र शीघ्र जारी कर दिया जावे।

विनीत—

दिलीप बनस्थी

भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा

पो० रेवाड़ी जि० गुड़गांव

(पंजाब)

Printed by Saryudayal Dikshit at the
Mittra Press, Etawah.
Published by Dalip Singh Bhagwadbhakti
Ashram, Rampura.

पुस्तक मिलने का पताः—

भगवद्भक्ति आश्रम,

रामपुरा पो० रेवाड़ी

ज़ि० गुड़गांव (पञ्जाब)

—०*०—

नोटः—डाक द्वारा पुस्तक मँगाने वाले सज्जनों को बा-
लिये कि -) टिकट महसूल के लिये अवश्य भेजें।

—:०:—